असली आध्यात्मिकता 'प्रेममयी भक्ति'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (२,४/४/२०२१) से संकलित

एक मन-प्राण हो जाना प्रेम की पहिचान है, जैसे – 'पानी और लहर, हंस तथा हंसिनी, देखने व कहने में अलग-अलग हैं, वस्तुतः एक ही हैं; ऐसी एकात्मता होना ही प्रेम है; ऐसा प्रेम जहाँ है, वहाँ कोई भेद (भिन्नता, अलगाव) नहीं, कोई विकार नहीं, एक रुचि, एक विचार होता है; इसी सिद्धांत पर श्रीराधामाधव की सभी रसमयी लीलाएँ सम्पन्न हुई हैं –

जोई जोई प्यारो करै सोई मोहि भावै,
भावै मोहि जोई सोई-सोई करैं प्यारे ॥
मोकों तौ भावती ठौर प्यारे के नैनन में,
प्यारौ भयौ चाहै मेरे नैंनन के तारे ॥
मेरे-तन प्रान हूँ तें प्रीतम प्रिय,
अपने कोटिक प्रान प्रीतम मोसों हारे ॥
'जै श्रीहित हरिवंश' हंस-हंसिनी साँवल गौर,
कहौ कौन करै जल-तरंगन न्यारे ॥

(श्रीहितहरिवंशजी कृत हितचतुरासी से)

लीला क्या है ? लहर; पानी क्या है ? प्रेम; ऐसा विशुद्ध प्रेम ही राधाकृष्ण है, ऐसा अविनाशी प्रेम ही गुरुभक्ति है, ऐसा एकरस प्रेम ही भक्ति है; ऐसा प्रेम ही वास्तविक प्रेम है, जहाँ रुचि, लक्ष्य की भिन्नता नहीं है; ऐसा परम प्रेम केवल राधामाधव में है; संसार (सांसारिक दंपत्ति, परिवार आदि) में ऐसा प्रेम न था, न है, न होगा। 'एक रुचि, एक मन, एक प्राण' इसी को प्रेम कहते हैं; ऐसा लक्ष्य हो जाना ही दिव्य प्रेम है; ऐसा अलौकिक प्रेम करना ही हम सभी लोगों को सीखना चाहिए; 'सच्ची भक्ति' में ही ऐसा अनुपम-परमाद्भुत 'प्रेम' सम्भव है; ऐसा नित्य (शाश्वत, सनातन) प्रेम 'भक्त-भगवान् व गुरु-शिष्य' में होता है, जो प्रेम 'राधामाधव का स्वरूप' है; ऐसे दिव्य प्रेम की भावना 'श्रीजी की कृपा' से ही आती है।

नास्तिकता के प्रश्न 'भक्तों' के मन में नहीं आते – 'ऐसा क्यों हुआ...?' ये सच्चे भक्त कभी नहीं सोचते; तर्क-वितर्क, व्यर्थ चिन्ता भक्तजन बिल्कुल नहीं करते हैं। 'जो कुछ अपने इष्ट (श्रीप्रभु) कर रहे हैं, वही ठीक है' ऐसा सोचना ही सच्ची भक्ति है। 'श्रीकृष्ण ब्रज से द्वारिका क्यों गये ?' ये कभी ब्रजवासियों के मन में प्रश्न ही नहीं आया, बाहरी रूप से दिखाई पड़ा कि 'श्रीठाकुरजी' ब्रजवासियों को छोड़कर द्वारिका गये...; बहुत से लोग प्रश्न करते हैं कि गोपी-ग्वाल क्यों नहीं गये कृष्ण के साथ द्वारिकापुरी में...? वस्तुतः गोपी-कृष्ण एक हैं (ब्रजवासियों का तन-मन-प्राण कृष्णमय था, कृष्ण की इच्छा में ही गोपी-ग्वालों की इच्छा थी, एक प्रेम में सब बँधे थे, कृष्ण-सुख में ही उनका सुख था)। 'ब्रजवासीजन कृष्ण के साथ ब्रज छोड़कर क्यों नहीं गये ?' ये शंका हमारे-तुम्हारे मन में होती है क्योंकि हमारे मन में भेद है; जबकि 'ब्रजवासियों का मन' सर्वथा ममाहं व भेदभाव से शून्य होकर सर्वात्मभाव से 'श्रीकृष्ण' को ही समर्पित था।

आज प्रायः 'आध्यात्मिक-समाज' साम्प्रदायिक-भेदों में घिरा हुआ है – हम अमुक सम्प्रदाय के हैं, हम अमुक सम्प्रदाय के हैं; इस प्रकार अनेकों भेद हैं, इन भेदों के रहते हुए समत्व या अनन्यता कैसे सम्भव है ? भेदबुद्धि के कारण ही सारा समाज नष्ट (तेजहीन) हो रहा है। यहाँ तक कि लोग युगलमंत्र व महामंत्र अलग-अलग मानते हैं, इस भेद को मिटाने के लिए एक बहुत बड़ी क्रान्ति की आवश्यकता है, बड़े-बड़े महापुरुषों ने इस भेदबुद्धि को नष्ट करने का प्रयास किया है; श्रीजीवगोस्वामीजी ने भी इस संकीर्ण-विचारधारा से सावधान होने की प्रेरणा दी है –

युगलमंत्र ही महामंत्र

सर्वचेतोहरः कृष्णस्तस्य चित्तं हरत्यसौ।
वैदग्धीसारविस्तारैरतो राधा हरा मता ॥

(श्रीजीवगोस्वामीजी कृत महामन्त्र व्याख्या से)

सभी के चित्त को हरण करने वाले 'कृष्ण' हैं, इसलिए उनका नाम 'हरि' है और उनके भी चित्त को हरण करने वाली 'श्रीजी' हैं, इसलिए उनका नाम है – 'हरा' ('हरा' का संबोधन बनता है – 'हरे' इसका अर्थ है – 'राधे')

'राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे।'

अर्थात्

'हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।'

'हरे राम' का अर्थ है - जो 'राधा' रमण करती हैं (उन 'कृष्ण' से रमण करने वाली)।

"राधारमण राधारमण रमण रमण राधे राधे ॥"

अर्थात्

"हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥"

वास्तविक ब्रजोपासना

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (१७/४/२०१४) से संग्रहीत

उपनिषदों ने जिस 'ब्रह्म' का प्रतिपादन किया, उसे साधारण जीवों को कैसे समझ में आए ? इसके लिए भगवान् वेदव्यासजी ने 'ब्रह्मसूत्र' की रचना की, जिससे सम्पूर्ण वेद पढ़ने की आवश्यकता नहीं, वेदान्त पढ़ने की आवश्यकता नहीं; 'ब्रह्मसूत्र' के माध्यम से सरलता से मनुष्य 'अनन्त ब्रह्म' की वास्तविकता को समझ सके, 'उसको पाने का क्या उपाय है' ? इसे जान सके; इसीलिए संक्षेप में 'सूत्र रूप में' इसका निर्माण हुआ, उन सूत्रों को विस्तार से खोलना ही 'भाष्य' है। कहने वाला कम अक्षरों में कुछ कह गया और उसको विस्तार से हम समझें ताकि उसका अभिप्राय मालूम हो, इसके लिए 'भाष्य' की रचना हुई; अतः सभी आचार्यों ने अपने-अपने हिसाब से 'ब्रह्मसूत्र' पर भाष्य की रचना की।

शंकराचार्यजी ने जो भाष्य किया, वह 'शांकरभाष्य' कहलाता है। रामानुजाचार्यजी ने जो भाष्य किया, वह 'रामानुज-भाष्य' अथवा 'श्री-भाष्य' कहलाता है; इसी तरह से माध्वाचार्यजी ने जो भाष्य किया, उसके माध्यम से 'द्वैत' मत की स्थापना की। निम्बार्काचार्यजी ने अपने भाष्य के माध्यम से 'द्वैताद्वैत' मत का प्रतिपादन किया। सभी आचार्यों ने ब्रह्मसूत्रों का जो विवरण प्रस्तुत किया, वह है 'भाष्य'। गौड़ेश्वर-सम्प्रदाय में 'भाष्य' की रचना नहीं की गयी थी क्योंकि महाप्रभु चैतन्यदेवजी ने कहा कि ब्रह्मसूत्र का भाष्य है 'श्रीमद्भागवत', इसलिए अलग से 'भाष्य' बनाने की आवश्यकता नहीं है। पीछे अन्य वैष्णवों ने झगड़ा प्रस्तुत किया जयपुर में गोविन्ददेवजी के मंदिर में, तब बलदेवाचार्यजी ने विश्वनाथ चक्रवर्तीजी के समय में जो भाष्य बनाया, उसका नाम हुआ 'गोविन्द-भाष्य'; यह गौड़ेश्वर-सम्प्रदाय का भाष्य था; इसमें बलदेवाचार्यजी ने 'अचिन्त्य भेदाभेद' मत का प्रतिपादन किया, उन्होंने कहा कि भेद और अभेद पर जो इतना विवाद हो रहा है, कोई समझ ही नहीं सकता है - कितना भेद है, कितना अभेद है ? न भगवान् को समझा जा सकता है, न भगवान् की माया को ...।

यही परिस्थिति ब्रज में हुई, आज ब्रज में 'निकुञ्ज-उपासना और ब्रज-उपासना' के मध्य लोगों ने अत्यन्त भेद पैदा कर दिया है, जबकि भेदवाद अपराध है; इसके विरोध में बोलने की किसी की हिम्मत नहीं है, अगर कोई बोलता है तो उसका कड़ा विरोध होता है, उसकी कटु आलोचना होती है। बहुत बर्षों पहले जब मानमंदिर द्वारा संचालित 'राधारानी ब्रजयात्रा' वृन्दावन पहुँची तो 'रामजिवाई सत्संग भवन' में हमने (बाबाश्री ने) कहा कि इतना अधिक भेद नहीं करना चाहिए, इस भेदभाव का खण्डन किया, वहाँ वृन्दावन के एक बहुत बड़े विद्वान् ने भी हमारा भाषण सुना तो उन्हें ये चर्चा अच्छी नहीं लगी और लोगों से इस वास्तविकता (कटु सत्य) की निन्दा करने लगे...। (कथनाशय है कि विशुद्ध भक्ति में प्रबल बाधक इन संकीर्ण-भावनाओं को वैष्णव-समाज से हटाना तो बहुत दूर की बात है, लोग इसे सुनना ही पसंद नहीं करते।)

निकुञ्ज अलग, ब्रज अलग - यह धारा कैसे चली ? यह इतनी बढ़ी कि इसमें अपराध होने लगे। बड़े-बड़े लोगों ने भक्तापराध (महापुरुषों का अपराध) किया और इसका दण्ड भी उनको मिला। यह भेद इतना बढ़ा कि ब्रज में एक बहुत बड़े सेठ ने आजीवन (बाबाश्री के गुरुदेव) श्रीप्रियाशरणजीमहाराज की सेवा करने के बाद भी अंत में उनका त्याग कर दिया केवल इस बात पर कि ये ब्रज के उपासक हैं और हम निकुँज के उपासक हैं। महदापराध से लोग नहीं डरते हैं और यह बीमारी बढ़ते-बढ़ते निम्बार्क-सम्प्रदाय के अनुयायियों में भी प्रवेश कर गयी। प्रायः 'महावाणी के उपासक' ऐसे हैं जो आज तक ब्रज को पृथक् मानते हैं और निकुञ्ज को पृथक् तथा यही 'भ्रमात्मक-शिक्षा' समाज को प्रदान किया करते हैं जबकि आचार्यों का आशय इतना भेदजनक नहीं था। यह भेद

कहाँ से चला ? स्वामी हरिदासजी के प्रमुख शिष्यों में एक विहारिनदेवजी थे, उनको हरिदासी-सम्प्रदाय में गुरुजी कहा जाता है, उन्होंने एक पद में लिखा है कि निकुञ्ज के आवरण हैं – गोपी, ग्वाल और गाय; इसी बात को लोगों ने पकड़ लिया और फिर आगे सभी लोग ब्रजलीला को आवरण मानने लगे। यहाँ तक कि बाबा प्रियाशरणजी जब वृन्दावनवास कर रहे थे, एक बार 'बरसाना' के कुछ ब्रजवासीजन उनसे मिलने गये तो बाबा ने प्रेम से उनका स्वागत किया तो उनकी सेवा में रहने वाले सेठ ने विरोध किया, जबकि उन्हीं सेठ ने पहले बरसाना में श्रीजी के मंदिर का पुनर्निर्माण कराया था लेकिन बाद में बरसाना आना बन्द कर दिया क्योंकि अन्यत्र दीक्षा लेने के कारण उनके दिमाग में यह बात बैठ गयी कि हमारा वृन्दावन इतना ही है, निकुञ्ज इतनी ही है।

जिन लोगों ने रसोपासना की आड़ में भेद की दीवार खड़ी की, उनको अपराध लगा, उसका दण्ड मिला और रस की एक बूँद भी उन्हें नहीं मिली। चैतन्य महाप्रभुजी ने अवतारवाद का खण्डन करने वाले अद्वैतवादियों को मायावादी बताया था; उसी प्रकार अब अनन्यता में भी मायावाद प्रवेश कर गया है, इस मायावाद का खण्डन करने वाला समाज में कोई नहीं है और यह बीमारी बढ़ती जा रही है। विशुद्ध सत्संग के अभाव में लोग 'महापुरुषों व आचार्यजनों की वाणी' का दुरुपयोग करते हैं। "विहारिनदेवजी ने जो कहा था कि गोपी, ग्वाल और गाय निकुञ्ज के आवरण हैं" इसका वास्तविक भाव न समझकर गलत ढंग से प्रचार-प्रसार हुआ, जिससे भेदबुद्धि बढ़ती जा रही है।

राधावल्लभ-सम्प्रदाय का इतिहास यह है कि ध्रुवदासजी चार आवरण मानते हैं, उन चार आवरणों में सबसे पहला आवरण है ' सांसारिक विषय'। जब तक विषयासक्ति है, तब तक तुम अनन्य नहीं बन सकते हो; इस तरह देखा जाय तो पहला आवरण तो मिटा नहीं और हम लोग रसिक बन जाते हैं।दूसरा आवरण है - ऐश्वर्य (मालकियत), यह आवरण भी नहीं हटाते क्योंकि हर आदमी मालिक बनना चाहता है। हम साधु बनकर भी महंत-मण्डलेश्वर बनना चाहते हैं, यह दिखाता है कि हम ऐश्वर्य के भूखे हैं।

तीसरा आवरण है – माहात्म्य, इसका यह माहात्म्य है, 'इससे यह मिलेगा, उससे वह मिलेगा' ये सब आवरण हैं; ये आवरण जब तक हैं, रस नहीं मिलेगा। पहली बात तो यह है कि तुम अपने को अनन्य रसिक घोषित करते हो लेकिन तुम्हारे मन से विषय तो हटा नहीं है, ऐसी स्थिति में अभी तुमको रस कहाँ मिला है। पहले कल्मष दूर होने चाहिए –

श्रृण्वतां स्वकथां कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः ।
हृद्यन्तःस्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम् ॥
नष्टप्रायेष्वभद्रेषु नित्यं भागवतसेवया ।
भगवत्युत्तमश्लोके भक्तिर्भवति नैष्ठिकी ॥

(श्रीभागवतजी १/२/१७,१८)

भगवत्कथा श्रवण करने पर हृदय में भगवान् प्रवेश करके स्वयं अनर्थों को हटाते हैं, तब जाकर नैष्ठिकी भक्ति होती है, तब रस मिलता है। जब तक हृदय में अभद्र हैं, रस कहाँ से मिलेगा, कभी नहीं मिलेगा। तुम अध्यात्म पथ पर आकर भी धन की, विषयसुख की कामना करोगे। हमने देखा है कि रसिक लोग समाज-गायन के बाद दूध के कुल्हड़ पर लड़ते हैं, ये सब क्या रसिकता है ...?

'राधासुधानिधि' में बताया है कि रसिकता कैसे आयेगी –

"दूरादपास्य स्वजनान्सुखमर्थकोटिं सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः" ॥ (श्रीराधासुधानिधि - ३२)

स्वजन-परिवारादि में हमारी ममता बनी हुई है। विषयों के सुख, शरीर के सुख, इन्द्रियों के सुख अभी बने हुए हैं, तब फिर रस कैसे मिलेगा ? करोड़ों प्रकार का अर्थ (धन-सम्पत्ति आदि), वैभव है, इनको दूर से छोड़ दो, इस प्रकार मलवत् छोड़ो कि उसकी गंध तक न आवे। सभी साधनों से निराश हो जाओ, इसको कहते हैं राधारानी के चरणों का आश्रय। अभी हम आश्रय करते हैं किसी सेठ का कि धन दे जाये, नहीं देगा तो हमारा खर्च नहीं चलेगा; इस तरह से भगवदाश्रय कहाँ रहा ? श्रीभक्तमालजी में एक महात्मा की कथा है, उन्होंने किसी संत को एक लाख

रुपये भेंट किये। पुराने जमाने के एक लाख रुपये अबके अरबों रुपये के बराबर हुए। सन्तजी ने धन नहीं लिया और कहा –

दयो राम के लेंय हम, आशा करें न अन्य।
लाख खाक सम देंय तज, राखें भक्ति अनन्य॥

तुम ले जाओ अपने लाख रुपये, मिट्टी की तरह हम इसका त्याग करते हैं। हम किसी जीव की आशा नहीं करते, इसको सच्ची अनन्यता कहते हैं। हम निकुञ्ज की उपासना कर रहे हैं और अन्याश्रय कर रहे हैं कि वह पैसा दे रहा है, वह बहुत बड़ा मंत्री है, उससे दब रहे हैं तो रस आदि कुछ नहीं मिलेगा। भगवदाश्रय लेने वाले को कठिनाइयाँ आती हैं लेकिन इन कठिनाइयों को जो सहन करता है, वही अनन्य बन पाता है। आजकल के लोग श्रंगार-रस के कुछ पद गाते हैं और सोचते हैं कि हम रसिक बन गये। जबकि महावाणी में लिखा है –

जो कोऊ प्रभु के आश्रय आवै।
सो अन्याश्रय सब छिटकावै॥

अन्य जितने भी आश्रय हैं, जीवों के आश्रय, धन का आश्रय, भोग का आश्रय, स्त्रियों का आश्रय, कामनाओं-वासनाओं का आश्रय – ये सब दूर से छोड़ दो। आश्रय तो हमने संसारी पकड़ रखा है फिर रस की प्राप्ति कहाँ से हो सकती है। राधावल्लभ-सम्प्रदाय में बताया गया है कि भगवान् कृष्ण ने सात दिन तक गिरिराजजी को क्यों धारण किया ? क्योंकि सात प्रकार का अन्याश्रय होता है, वह सब छूट जाये, इसलिए भगवान् ने सात दिन तक पर्वत धारण किया। 'अन्याश्रय' माने जितने भी आश्रय हैं; हम लोग 'आश्रय' ही नहीं समझते, कहीं पंगत होती है तो सोचते हैं – चलो, स्वादिष्ट भोजन का रसास्वादन करें, नाम है कि यह भगवत्प्रसाद है लेकिन आश्रय रहता है जिह्वा का। इसलिए रस कहाँ है ? मनुष्य रसिक तभी बनेगा जब अन्याश्रय का त्याग करेगा। इसके बाद महावाणी में लिखा है –

'विधि निषेध के जे जे कर्म।
तिनको त्याग रहे निष्कर्म।'

विधि के कर्म छोड़ो – ये करो, ये मत करो तथा निषेध के कर्म – ये गन्दा काम है इसे छोड़ो। इस तरह से विधि-निषेध के चक्कर को छोड़ो। लेकिन हम लोगों की विधि तो पहले से ही छूटी हुई है तथा निषेध छूटता नहीं है। फिर निष्कर्म कैसे बनेंगे ? निष्कर्मता क्या है ? इसका उल्लेख श्रीभगवान् ने गीताजी में किया है –

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्न्यासेनाधिगच्छति॥

(श्रीगीताजी १८/४९)

सारे जीवन लोग महावाणी पढ़ते हैं लेकिन 'निष्कर्मता' क्या है, इसे जानते तक नहीं। 'निष्कर्म' जब तक नहीं होंगे तब तक हमें रस की प्राप्ति नहीं हो सकती। निष्कर्मता क्या है ? जिसकी कहीं आसक्ति नहीं है, मन को जीत लिया है, स्पृहायें चली गयीं हैं। 'निष्कर्म' थे स्वामी श्रीहरिदासजी महाराज।

"अनन्य नृपति श्री स्वामी हरिदास।
सुरपति भूपति कंचन कामिनि, जिनकें भायें घास"॥

चाहे देवराज इंद्र हों या पृथ्वी के राजा, कंचन, कामिनी आदि किसी को वह घास भी नहीं समझते थे; वे थे सच्चे निकुञ्ज के रसिक; उन्होंने भेद पैदा नहीं किया। कोई भी आचार्य भेद पैदा करने का अपराध नहीं करता। भेदबुद्धि नामापराध है। आजकल केवल नामापराध चल रहा है। स्वामी हरिदासजी का प्रसिद्ध पद है –

मन लगाइ प्रीति कीजै कर करुवा सौं ब्रज बीथिन दीजै सोहनी।
वृन्दावन सौं वन उपवन सौं गुंजमाल हाथ पोहनी॥
गो गो-सुतनि सौं मृगी मृग-सुतनि सौं और तन नेंकु न जोहनी।
श्रीहरिदास के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी सौं चित ज्यौं सिर पर दोहनी। (केलिमाल अष्टादस पद १२)

यह उनके सिद्धांत के अठारह पदों में एक पद है, उन्होंने कहा कि ब्रज की गलियों में जाकर बुहारी लगाओ; क्या उन्होंने ब्रज और निकुञ्ज में भेद पैदा किया ? आगे वह कहते हैं - ब्रज की गायों और बछड़ों से प्रेम करो। आजकल के लोगों ने तो केवल विहारिनदेवजी की एक कड़ी पकड़ ली कि गोपी, ग्वाल, गाय निकुञ्ज के आवरण

हैं और अपने मूल आचार्य स्वामी श्रीहरिदासजी की इस वाणी पर ध्यान नहीं दिया; इसके साथ ही श्रीस्वामीजी ने कहा कि **"और तन नेंकु न जोहनी"** और किसी की ओर मत देखना। कोई सेठ आ गया या कोई स्त्री आ गयी, कोई मंत्री आ गया तो उनकी ओर दृष्टि भी मत करना। स्वयं विहारिनदेवजी ने कहा कि रसिक तो बनते हो लेकिन अपराध से डरो।

"साधारण भक्त अपराध सों, कंपत जू हियो"।

लेकिन आज का अनन्य रसिक अपराध से नहीं डरता। विहारिनदेव जी कहते हैं कि छोटे से छोटे, साधारण भक्त के अपराध से हमारा हृदय काँपता है। इसके अतिरिक्त आजकल के रसिक भागवत पढ़ने से रोक देते हैं जबकि विहारिनदेवजी ने लिखा –

"परमहंस संहिता भागवत छाँड़ि चलत ढिंग ढेरी"।

परमहंसों की संहिता भागवत का अपमान करके चलते हैं और अपने को अनन्य मानते हैं लेकिन विहारिनदेवजी आगे कहते हैं –

भक्त न सोहत माँगत भीख,
आपुन लजत लजावत हरि गुरु, जिनकी उलायी क्षीर।

वर्तमानकाल के हम जैसे रसिकों का हाल यह है –

घर घर फिरत उगाहत चंदा।
सब दिन दुखी दरिद्री बाहर घर में छांड़ गये नन्दनन्दा।
हांड़ी हाथ ताक कौड़िन की मग रज छानत मगबंदा।
विहारिन दास सों ऐंठ चलत सठ विषयिन के द्वारे छन्द बंदा।
किये सिंगार भिखारी डोलत घर घर फिरत उगाहत चन्दा॥

आज के रसिक अपने आचार्यों के विपरीत नंदनंदन नाम नहीं लेना चाहते, 'वृषभानुनंदिनी' कहना पसंद नहीं करते क्योंकि उनकी दृष्टि में ये ब्रज के ठाकुर हैं, निकुञ्ज के नहीं। ठाकुरजी-श्रीजी के रूप में हाथ में रत्नों की हंडी है लेकिन रास्ते की धूल छान रहे हैं। निष्किंचन भक्तों से ऐंठ करते हैं और विषयी लोगों के द्वार पर जाकर रस के छन्द सुनाते हैं; ऐसे लोगों को अनन्य कैसे माना जा सकता है क्योंकि स्वयं विहारिनदेवजी ने इस तरह के कलुषित चित्त वालों का खण्डन किया है -

"माँगत भीख जनम गयो, गयो न भीख की ऊख"

जन्म भर हम दूसरों से वासनापूर्ति की भीख माँगते रहे, स्त्री से भोग की भीख माँगते रहे, धनी आदमी से भीख माँगते रहे कि कुछ धन दे दे –

प्रेम पदारथ दूर है, बिन सेये रज रुख।
बिन सेये रज रुख दुख सहि लेत घनेरे।
कहा किये अहंकार विपदि आपद गहि घेरे॥
होत न सकुच ग्लानि मनहिं घर में लघु मानत।
कहत बिहारीदास भीख वक्ता क्यों मानत॥

अपने मन में अहंकार करता है रसिकता का। विहारिनदासजी ने अनन्यता, रसिकता के स्वरूप को कहा है –

"अब हौं कासौं बैर करौं।
ऐसे कहत पुकारत श्रीमुख घट-घट हौं बिहरौं"॥

अगर ऐसा नहीं है तो तुम अपराध करोगे, आगे वह साक्षात् कहते हैं –

'तौ कहियत अपराधी जन जो आज्ञा पग न धरौं"।

अगर भगवान् की इस आज्ञा पर हमने पाँव नहीं रखा तो अपराधी हो जायेंगे, रसिक तो कुछ नहीं बनेंगे।

"दूसरी करै बहुत बिबूचौ होहू नरक परौं"

निकुञ्ज में नहीं जाओगे, नरक में जाओगे।

"प्राणी सबै समान अवलोकौं, भक्तनि अधिक डरौं।
बिहारीदास हरिदास कृपा नित निर्भय बिचरौं"॥

भक्तापराध से अधिक डरता हूँ। आज का समाज इतना अधिक भेदभाव में फँस गया है कि जहाँ भी जाता है, वहीं भेद पैदा करता है। यहाँ तक कि कुछ अनन्य रसिकों ने बरसाना आना छोड़ दिया, उनके विचार में 'बरसाना' ब्रज है, 'वृन्दावन' निकुञ्ज है; जबकि यह अपराध है, यह गलत रास्ता है। 'बरसाने की लीला' स्वामी हरिदासजी ने गायी है, विहारिनदेवजी ने गाई है किन्तु आज का रसिक उनसे भी आगे बढ़ गया है। स्वामी हरिदासजी का पद है –

प्यारी जू आगैं चलि आगैं चलि,
गहवर वन भीतर जहाँ बोलै कोइल री॥

(केलिमाल-सौरभ ४६)

श्रीस्वामीजी ने बरसाने के गह्वरवन की लीला गाई है। अन्यत्र उन्होंने साँकरीखोर की भी लीला गायी है -

"हमारो दान मार्‌यो इन"

लेकिन आज का वृन्दावन का रसिक इतना आगे बढ़ गया है कि बरसाना ही नहीं आना चाहता, कहता है कि बरसाना ब्रज है। एक बार हम वृन्दावन में रसोपासना के एक प्रसिद्ध स्थान पर पहुँचे तो वहाँ हमारा परिचय इस प्रकार दिया गया कि ये ब्रज से आये हैं। हमें सुनकर बड़ा विचित्र लगा कि ये तो इस प्रकार कह रहे हैं जैसे 'बरसाना' विदेश में हो लेकिन हम चुप रहे और सोचा कि यहाँ कुछ मत बोलो, यह अनन्य रसिकों का दरबार है। यहाँ तो जैसे सिक्खों के गुरुद्वारे में जाते हैं तो पगड़ी से सिर ढक लेते हैं। 'ग्रन्थ साहब के दरबार' में जाना है तो सिर ढको तब दर्शन मिलता है। तो हमने सोचा कि यहाँ भी पगड़ी बाँध लो, कुछ मत बोलो, लेकिन ये बातें हमारे मन में चुभ गयीं, ये समाज जिस दिशा की ओर जा रहा है, इसके जिम्मेदार हम लोग हैं। हम लोगों ने ही विकृति पैदा की है। समाज को अपराध के रास्ते पर डाल दिया। विहारिनदेवजी ने लिखा है कि **"हौं ब्रजवासिन को पाल्यो पिल्ला"** अरे, ब्रज के कुत्ता बन जाओ, यही बड़ा ऊँचा काम है, रसिक तो पीछे बनोगे। पिल्ला कहते हैं कुत्ते के बच्चे को, कुत्ता तो फिर भी बेचारा पहरा देता है, पिल्ला तो कुछ नहीं करता। विहारिनदेवजी कहते हैं कि मैं ब्रज की कुछ सेवा नहीं कर पाया, पिल्ला हूँ केवल दूध पीता हूँ; इसको कहते हैं रसिकता।

बहुत से लोग आते हैं और जो भजन कर रहे हैं, उन साधकों को बहकाते हैं कि छोड़ो गीता और भागवत। केवल इतना ही करो - रस के पदों का पाठ करो, रसिक ग्रन्थों का पाठ करो, महावाणी आदि का पाठ करो और बाकी सब छोड़ दो। सब छोड़ देंगे तो गाँठ की रही-सही भक्ति भी चली जायेगी। रसिक बनने बहुत से लोग चले तो उनकी वैष्णवता भी चली गयी, भक्ति भी चली गयी।

"व्यास आस सागर में डूबे, आयी भक्ति बिसारी"

सबको छोड़ने के लिए कहते हैं आजकल के ये रसिक, लेकिन तुमने कहाँ कुछ छोड़ा ? वासना छोड़ी नहीं, जिह्वा की लोलुपता छोड़ी नहीं। भागवत में वर्णन आता है –

संतुष्टः केन वा राजन् न वर्तेतापि वारिणा।
औपस्थ्य जैह्वयकार्पण्याद् गृहपालायते जनः॥

(भा. ७/१५/१८)

पानी पीकर संतोष कर लो। लेकिन हमलोग जीभ और शिश्न के कारण कुत्ता बने घूम रहे हैं, रसिक तो भला क्या बनेंगे ? 'गृहपाल' कहते हैं 'घर की रखवाली करने वाले कुत्ते को'। हम लोग हैं तो गृहपाल और घोषणा करते हैं कि हम अनन्य हैं। स्वामी हरिदासजी ने कहा है –

हित तौ कीजै कमलनैंन सौं, जा हित आगैं और हित लागै फीकौ।
कै हित कीजै साधु संगति सौं ज्यौं कलमष जाइ जीको॥

(केलिमाल सिद्धांत पद ७)

या तो बिहारीजी से प्रेम करना या संतों से प्रेम करना और किसी से प्रेम मत करना; न धन से, न संपत्ति से क्योंकि वहाँ तुमको कल्मष मिलेगा। जब तक कल्मष नष्ट नहीं होगा तब तक तुमको रस की प्राप्ति कहाँ से होगी ? कल्मष जाना आवश्यक है। यही तो भागवत में कहा गया है कि कल्मष गए बिना रस की प्राप्ति नहीं हो सकती –

शृण्वतां स्वकथां कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः।
हृद्यन्तः स्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम्॥

(श्रीमद्भागवतजी १/२/१७)

'भगवान्' हृदय में प्रवेश करके स्वयं अनर्थ दूर करेंगे, जब अनर्थ नष्ट हो जायेंगे, तब नैष्ठिकी भक्ति होगी। सारा अध्यात्म-पथ ही हम लोगों ने दूषित कर दिया, समाज को रसिक और अनन्य बनाने के पीछे विकर्म करा दिये, प्रमाद उत्पन्न किया -

नूनं प्रमत्तः कुरुते विकर्म यदिन्द्रियप्रीतय आपृणोति।
न साधु मन्ये यत आत्मनोऽयमसन्नपि क्लेशद आस देहः॥

(श्रीभागवतजी ५/५/४)

जब प्रमाद है तो अवश्य वहाँ 'विकर्म' होगा। विकर्म क्या है ? इन्द्रियों की प्रीति के लिए जो कुछ करोगे, जीभ और शिश्न की तृप्ति के लिए जो कुछ करोगे, ये सब विकर्म है। हम लोगों ने ऐसा रसिक बनाया कि जीव 'विकर्म' में डूब

गया, प्रमाद में डूब गया और अन्त में विनाश को प्राप्त हो गया। स्फुट-वाणी में हरिवंशजी ने लिखा है –

"तेरी सौं भइया कृष्ण गुण संचु"

'तेरी सौं' सौगन्ध खाकर कह रहे हैं, इससे ज्यादा दृढ़ता-पूर्वक और क्या कहा जा सकता है, तेरी सौगंध खाकर कहता हूँ, जबकि भक्तों की सौगंध नहीं खाना चाहिए। सौगंध खाकर कहता हूँ कि कृष्ण-गुण गाओ।

कुत्सित वाद विकारहिं सुनु सिव पर धन पर तिय बंचु ।।

हे शिष्य, हे बेटा ! कुत्सित मतों को छोड़कर के पराये धन और परायी स्त्री का त्याग कर दो, तब कृष्ण-गुण गाओ। सबसे ज्यादा गड़बड़ हम लोग करते हैं, हमेशा सोचते हैं कि कोई चिड़िया फँसे, कोई धन दे जाये।

स्वामी हरिदासजी ने कहा है –

"और कोई भूले तो भूले, तुम मत भूलो मालाधारी" ।

अरे ! तुमने माला और तिलक धारण किया है, तुम क्यों भूलते हो ? वर्तमानकालीन समाज में इन सब बातों को कहने वाला कोई नहीं है। सब अपने को अनन्य बताते हैं, दो-चार रस के पद गाये और अनन्य बन गये; अधिकतर सब जगह यही है।

एकबार वल्लभकुल के एक वैष्णव आये, उनसे हमने कहा कि प्रसाद पा लीजिए तो बोले कि गिरिराजजी जाकर ही प्रसाद पाउँगा, मर्यादी-वैष्णव वे होते हैं, जो सब जगह प्रसाद नहीं पाते हैं। संकीर्णता इतनी बढ़ गयी है कि मर्यादी बन गये हैं तो अन्यत्र प्रसाद नहीं पायेंगे। जबकि भक्त या ब्रजवासी के यहाँ प्रसाद पाने में कोई हर्ज नहीं है। ब्रजवासियों के तो कुत्ता बन जाओ, यही बहुत है। जैसा कि विहारिनदेवजी ने कहा कि हम तो ब्रजवासियों के पाले हुए पिल्ला हैं। सच्चा ब्रजनिष्ठ महात्मा वही है जो कहता है कि हम तो ब्रजवासियों के पिल्ला हैं, वही है सच्चा रसिक।

आज का आधुनिक रसिक कहता है कि हम तो बरसाना, नन्दगाँव जायेंगे ही नहीं, वह तो ब्रज है। एक प्रसिद्ध रसिक के पास हम दर्शन करने गये तो किसी ने हमारा परिचय दिया कि ये 'बरसाना' से आये हैं तो वह अनन्य रसिकजी बोले कि मैं जब 'नन्दगाँव' जाता हूँ तो ऐसा लगता है कि हौलेंड (विदेश) में आ गया हूँ; ये सुनकर हम फिर कभी उनके पास नहीं गये कि हमको हौलेंडवासी न समझ लें ...।

सच्ची 'रसिक-रहनी'

जैसा ब्रजभूमि में देखते हैं कि बहुत से संत-भक्तजन जाते हैं ब्रजवासी-गोपीजनों के द्वार पर भिक्षा लेते हैं, टुकड़े माँग-माँग करके जीवन-यापन कर श्रीभगवन्नाम, रूप, लीला, गुणों का कीर्तन करते हैं। जो सच्चे ब्रजरसानुरागी हैं, रूखे-सूखे टुकड़े खाते हैं, उनको भोग, सम्पत्ति, सम्मान नहीं चाहिए, ऐसे विशुद्ध प्रेमी भक्तजनों की लीला-चर्चा कहते-सुनते हैं।

ब्रज-वृन्दावन में रहने का यही लाभ है कि यहाँ रहने वाले को कहीं तीर्थ आदि में जाने की जरूरत नहीं है क्योंकि द्वार-द्वार पर ऐसे-ऐसे संत आ जाते हैं जो गंगा से भी अधिक पवित्र होते हैं। ऐसे-ऐसे भक्त होते हैं, श्रीमद्भागवतजी में शौनकादि ऋषियों ने कहा है –

यत्पादसंश्रयाः सूत मुनयः प्रशमायनाः ।
सद्यः पुनन्त्युपस्पृष्टाः स्वर्धुन्यापोऽनुसेवया ।।

(श्रीभागवतजी १/१/१५)

भगवान् के भक्त इतने पवित्र होते हैं कि गंगा को भी पवित्र कर देते हैं। कैसे भक्त होते हैं ? **'यत्पादसंश्रयाः'** जो केवल भगवान् का आश्रय लेते हैं; धन, सम्पत्ति, भोग आदि का आश्रय नहीं लेते हैं। **'सद्यः पुनन्त्युपस्पृष्टाः'** उनके दर्शन से ही वह पवित्रता होती है जो गंगा आदि से नहीं हो सकती है। 'स्वर्धुनी' गंगा को कहते हैं। **'स्वर्धुन्यापोऽनुसेवया'** बहुत दिनों तक गंगा, हरिद्वार, काशी, प्रयाग, गंगासागर आदि तीर्थों में जाकर स्नान करने से भी वह पवित्रता नहीं होती जो एक बार सच्चे श्रीकृष्ण-भक्तों का दर्शन मिल जाने से होती है (रसिक

भक्तों के दर्शन मात्र से सैकड़ों गंगाओं से भी अधिक स्नान हो जाता है।)

चाचा वृन्दावनदासजी ने लिखा है –

वृन्दावन सेवहु भाँति भली।
जहाँ रसिक संतन्ह को दरसन, चलत फिरत कुंजन गली॥

धन्य है वह ब्रज-भूमि जहाँ भगवान् के सच्चे भक्त रहते हैं, ऐसे भक्तों के दर्शन सहज हो जाते हैं जो ब्रजवासियों के दरवाजे-दरवाजे पर आते हैं भिक्षा माँगने, जिनको कुछ नहीं चाहिए, केवल जीवन-निर्वाह के लिए उदरपूर्ति कर (पेट में २ रोटी डालकर) श्रीभगवान् की रसोपासना (नृत्य-गान) करते हैं। यही बात गोपियों ने कहा है –

यदनुचरितलीलाकर्णपीयूषविप्रुट्
सकृददनविधूतद्वन्द्वधर्मा विनष्टाः।
सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य दीना
बहव इह विहङ्गा भिक्षुचर्यां चरन्ति॥

(श्रीभागवतजी १०/४७/१८)

अरे ! कृष्ण की रूप-लीला माधुरी से आकर्षित होकर ऐसे-ऐसे त्यागी 'राजा' राज-पाठ छोड़ करके इस ब्रजभूमि में आते हैं और श्रीकृष्ण के लीला-रस में निमग्न रहते हैं। श्रीश्यामसुन्दर की लीलायें, चरित्र ही ऐसे मीठे हैं कि कृष्ण का मिलना तो दूर रहा, कृष्ण दिखाई नहीं पड़ा परन्तु कृष्ण की लीला-चरित्र को सुनकर जिसने थोड़ा-सा भी रस चख लिया तो उसके चित्त की सहज ही चोरी हो जाती है और अपने आप संसार छूट जाता है।

ओह ! श्रीकृष्ण के चरित्र में ही ऐसा जादू है, ऐसा गजब है, ऐसा जुल्म है,ऐसा कहर है, ऐसा प्रलय है कि सुनने वालों का सब कुछ घर, द्वार, जमीन-जायदाद आदि सब में चौका लग जाता (नष्ट हो जाता) है।

'यदनुचरितलीलाकर्णपीयूषविप्रुट्'

जिसके लीलामृतरस को कर्ण-पुट द्वारा पान करने से 'यदि एक बूँद (एक छींटा) भी किसी के कान में एक बार भी घुस गया अर्थात् जिसने कृष्ण के लीला-चरित्र को सुन लिया' उसके हृदय का द्वन्द्व (राग-द्वेष) चला जाता है। ये अनादिकाल की मैल (कामादि विकारों की गंदगी) है हमारे-तुम्हारे मन में, एक जन्म की नहीं है। हमें-तुम्हें एक जन्म की याद है कि 'हम इस जन्म में पैदा हुए, वहाँ हमारा घर-गाँव था, हमारे माँ-बाप का नाम ये था, ऐसे भाई-बन्धु थे, ब्याह के बाद ऐसा घर मिला, ये पति आया, ये सास आयी' बस इतना याद है; लेकिन नहीं, जाने कितने जन्मों से ये मैल (गंदगी) जमा हो रही है और जाने किस-किस योनि में हम लोग गये हैं, याद नहीं है। किसी को याद नहीं है कि कब कुत्ते बने, कब सुअर बने, कब देवता भी बने, कब राक्षस भी बने ? तो जो अनादिकाल का मैल (द्वन्द्व 'राग-द्वेष') है – 'किसी से प्रेम करते हैं, किसी से चिढ़ते हैं, किसी की ओर हँसकर देखते हैं, किसी से मुँह फेर लेते हैं' ये द्वन्द्व कभी आज तक हम लोगों का मिटा नहीं, मनुष्य मर जाता है, चिता में फुँककर राख हो जाता है लेकिन ये मैल नहीं मिटता है, इसको लेकर के ही मरता है और जहाँ भी जन्म होता है, इन मायिक विकारों की गंदगी को लेकर ही पैदा होता है।

ब्रजगोपीजन कहती हैं कि गजब की बात तो ये है – 'बड़े-बड़े ज्ञानी ज्ञान-साधन करते हैं, योगी योग-साधन करते हैं लेकिन द्वन्द्व नहीं मिटता है परन्तु यदि श्रीकृष्णलीलासिंधु की एक बूँद भी किसी ने एक बार भी कर्ण-पुटों से पान कर ली तो उसका द्वन्द्व (हृदय का ज्वर) मिट जाता है और जिसका द्वन्द्व मिट गया तो उसका संसार मिट गया। संसार ऐसे मिट गया कि जब संसार से प्रेम ही नहीं रहा तो संसार मिट गया। कौन स्त्री ? कौन पुत्र ? महाप्रभु कृष्ण चैतन्य सर्वांग सुन्दरी विष्णुप्रिया को छोड़कर चले गये...।

'द्वन्द्वधर्मा विनष्टाः' संसार ही नष्ट हो जाता है भक्तों का श्रीकृष्ण-प्रेम में। **'सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य दीना'** 'श्रीकृष्ण-रस' घर, कुटुंब, महल-दुमहले आदि को सहज ही छुड़ा देता है और वह कृष्ण-प्रेमी दीनतापूर्वक सरल रहनी में रहकर निरन्तर ब्रजसेवा-आराधना में लगा रहता है। सच्चा ब्रजरसिक भक्त तो वही होता है, श्रीहरिराम व्यासजी ने लिखा है –

सुने न देखे भगत भिखारी।
तिनको काम दाम को लोभ न, जिनके कुंज बिहारी॥

'भक्तजन' धन (ऐश्वर्य, वैभव) और विषय-भोग (मल-मूत्र) की भीख नहीं माँगते। भक्त भिखमंगा नहीं होता है। उदर-पोषण करना अलग है लेकिन वासना की भीख नहीं माँगता है कि हमको पैसा दे दो, हम बैंक में जमा करेंगे, हमको मल-मूत्र दे दो, हम भोगेंगे; वह भक्त नहीं है, वह तो कोई ठगत होगा, सच्चा भक्त ये सब नहीं चाहता है। सच्चे भक्तजन तो प्रेमास्पद के प्रेम में दीन (सरल, निष्कपट, निष्काम) बन जाते हैं और उनकी श्रीइष्ट के नाम-रूप-लीला-गुण-धाम-जन आदि में सुदृढ़ रति हो जाती है। **'सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य'** 'प्रेमीजन' दीन कुटुम्ब को छोड़ जाते हैं, अनाथ बच्चों को छोड़ देते हैं, रोती-बिलखती हुई जवान बहू को छोड़कर चले जाते हैं, कोई-कोई अपने बूढ़े माँ-बाप को छोड़कर चले जाते हैं। श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी सची माता को छोड़कर के चले गये थे। **'बहव इह विहङ्गा'** अर्थात् एक-दो नहीं, गोपियाँ कहती हैं – इस 'चित्तचोर कृष्ण' से प्रेम करने वाले असंख्य हैं। **'विहङ्गा'** माने चिड़ियों की तरह विचरण करते हैं, आज चिड़िया इस पेड़ पर बैठती है, कल उस पेड़ पर जाकर बसेरा करती है, फिर उड़ करके तीसरा पेड़ पकड़ती है, इसी तरह से 'श्रीकृष्णप्रेमीजन' घर-द्वार छोड़कर के विहङ्ग-वृत्ति से (पक्षी की तरह) रहते हैं, कोई घर नहीं है, द्वार नहीं है। **'भिक्षुचर्यां चरन्ति'** कृष्ण-प्रेम में भिक्षावृत्ति से जीवन-यापन करते हैं, बड़े-बड़े राजा लोग भी सब भोगैश्वर्य छोड़कर के निष्ठापूर्वक ब्रजवास करते हैं और नित्य-निरन्तर श्रीकृष्ण-लीला का रसास्वादन करते रहते हैं। क्यों ? **'अलमसितसख्यै'** (भा. १०/४७/१७) श्यामसुन्दर की प्रीति में सांसारिक सुख छोड़ने नहीं पड़ते, अपने आप सहज ही छूट जाते हैं। गोपियाँ कहती हैं – 'अलमसितसख्यै' **"सखी ! ये कारे सब ठगहार"** इन कारों की प्रीति मत करना, कृष्ण अकृतज्ञ है, बेदरदी है (यह गोपियों की प्रेम-भाषा है)।

बेदरदी तोहि दरद न आवै।
चितवन में चित बस करि मेरौ,अब काहे को आँख चुरावै॥
कब सों परी द्वार पै तेरे, बिन देखे जियरा घबरावै।
पहले तो चित्त (मन) हर लिया, अब छिप गया। ये क्या प्रेम की रीति है ? ऐसे ही प्रेम होता है ! पहले तो चित्त को चुरा लिया, अब तड़पाता है। एक सखी बोली – यही उसके प्रेम की रीति है, पहले घायल करता है फिर पीछे मिलता है।

नारायण महबूब साँवरो, घायल करि फिर गैल बतावै॥

ये प्रेम की भाषा है, प्रेम में ऐसे ही शब्द निकला करते हैं और इस पीड़ा (तड़पने) में जो आनन्द है, उसके आगे करोड़ों-करोड़ों ब्रह्मानन्द भी तुच्छ हैं (इसको पीड़ा नहीं कहते)। श्रीकृष्ण-विरह को विषामृत कहते हैं, जो ऐसा लगता है ऊपर से विष है लेकिन अमृत है, 'जिसकी याद इतनी मीठी होती है' ये तो वही जान सकते हैं जिन लोगों ने श्रीकृष्ण से प्रेम किया है। रसिक संत महापुरुषों ने श्रीठाकुरजी के लीला-रस का गान करके ऐसा प्रेम किया है – स्वामी श्रीहरिदासजी जब गाते थे 'बिहारीजी' के लिए – 'मल्हार राग' गाया तो वर्षा हो गयी, 'दीपक राग' गाया दीपक जल गये, सब राग-रागिनी मूर्तिमान उनके स्वरों में थे (जो गाते थे, वैसा ही वातावरण बन जाता था), सारंग (ठंडी प्रकृति का राग) गाया तो दोपहर की चिलचिलाती हुई धूप और लू 'ठंडक' में बदल गयी (उनको 'एयर कंडीशन' लगाने की जरूरत नहीं थी, समय के अनुसार राग गाते थे, वैसा ही वातावरण बन जाता था। 'एयर कंडीशन' लगाओ तो वह 'बनावटी, कृत्रिम, रोग का घर' और बिजली फेल तो मशीन फेल)। कैसे-कैसे भक्त हुए हैं जिन्होंने प्रकृति को जीत लिया संगीतमयी उपासना से। श्रीहरिवंशजी 'श्रीराधावल्लभलालजी' को लाड़ लड़ाते थे। श्रीरूपगोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी दोनों ने वृन्दावन की माधुरी गायी, जिनके कारण सारा वृन्दावन रसमय, दिव्य था, अभी-अभी माया के जाल में भी (कलियुग में) चिन्मय था।

'श्रीसूरदासजी' जैसा आज तक कोई दुनिया में कवि नहीं हुआ, जिनके आँख का चिह्न ही नहीं था और फिर भी सारा संसार देख लिया - वर्षा, ग्रीष्म, शीत ऋतु आदि की प्राकृतिक उपमाएँ दी पदों का गान करके।

जहाँ रसिक महापुरुष रहते हैं वहाँ कृष्णमय वातावरण रहता है, ये पहिचान है, उनकी शक्ति से कलियुग प्रवेश नहीं करता है।

'श्रीमीराबाई' संतों को देखकर के बच्चे की तरह 'पिताजी-पिताजी' कहकर के उनके गोद में बैठ जाती थी अर्थात् 'प्राकृतिक काम भाव' बिल्कुल नष्ट (भस्म) हो गया था, जिसके संस्कार ही नहीं रहे; इतनी निडरता, इतनी सरलता बिना भाव के नहीं होगी, बनावटपन में नहीं हो सकती।

सांसारिक विषय-भोगों में तीन दुःख होते हैं –१. परिणाम-दुःख २. पाप-दुःख ३. संस्कार-दुःख (जो सबसे बड़ा दुःख है)। संस्कार ही भोग के मिट गये, ऐसी देवी श्रीमीराजी थीं। जिसके अन्दर अभी भोगों के संस्कार हैं वह मीराबाई को नहीं समझ सकता, उसको ये सब कड़ी (पद) लाखों बता दो, उसकी समझ में नहीं आएगा। संस्कार भी जहाँ नष्ट हो जाते हैं वह 'भक्ति' एक शक्ति है। जब 'भक्ति' आती है तो उसकी पहिचान है, सनकादिक ने पृथुजी को बताया था –

रतिर्दुरापा विधुनोति नैष्ठिकी
कामं कषायं मलमन्तरात्मनः।

(श्रीभागवतजी ४/२२/२०)

जब 'भगवद्रति' आती है तो काम रूपी कषाय नष्ट हो जाता है और यही नहीं 'संस्कार, वासना, आशय, लिंग शरीर' सब जल जाते हैं, 'भक्ति' वह परम शक्ति है। जिस अन्तःकरण में 'भक्ति' प्रकट होती है, उस अंतःकरण के पाँचों कोशों को जला देती है, उसके बाद केवल 'भक्ति' रहती है, जिससे मन, बुद्धि चिन्मय हो जाते हैं, उस मन में 'श्रीराधारानी-श्रीकृष्ण' आते हैं, विराजते हैं, लीला करते हैं, क्रीड़ा करते हैं ...।

ममाहं-मति से संकीर्णता

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (३/५ /२०१४) से संग्रहीत

'संकीर्णता' आखिर आती कैसे है, जबकि सभी शास्त्रों-धर्मग्रन्थों में लिखा है कि संकीर्णता (संकीर्ण-संकुचित-सीमित-मति) ही माया है, मेरा-तेरा ही माया है, तब फिर दिन-रात शास्त्राध्ययन करने वाले और प्रवचन करने वाले हम जैसे लोग 'संकीर्ण' क्यों हो जाते हैं ? कोई यदि बहुत पढ़ा-लिखा विद्वान है और प्रवचन करने वाला है, फिर उसके कार्य 'संकीर्ण' क्यों होते हैं ? ऐसा देखा गया है कि विद्वानों में 'संकीर्णता की समस्या' ज्यादा पायी जाती है, बड़े लोगों में 'संकीर्णता की बीमारी' अधिक देखने में आती है; ऐसा क्यों होता है ? यह संकीर्णता क्यों उत्पन्न हुई, जबकि सभी शास्त्र और संत-महात्मा कहते हैं -

सियाराममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

सब कुछ सीताराम है, श्रीभगवान् का स्वरूप है। भगवान् कृष्ण ने भी कहा है –

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।

(श्रीगीताजी ७/१९)

सर्वत्र वासुदेवमय भाव रखने वाला महापुरुष दुर्लभ ही नहीं सुदुर्लभ है अर्थात् अत्यन्त कठिन है ऐसे उदार महात्मा का मिलना जिसकी दृष्टि में सारा संसार श्रीकृष्ण है। इसके विपरीत 'संकीर्णता' ही माया है। निश्चित है कि जब 'भगवान् की कृपा' होती है तब संकीर्णता हट जाती है और यदि संकीर्णता नहीं हटी तो इसका मतलब भगवान् की कृपा नहीं है। इसके प्रमाण स्वरूप ब्रह्मा जी ने भागवत में कहा है –

येषां स एष भगवान् दययेदनन्तः
सर्वात्मनाश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम्।
ते दुस्तरामतितरन्ति च देवमायां
नैषां ममाहमिति धीः श्वशृगालभक्ष्ये॥

(श्रीभागवतजी २/७/४२)

इस थर्मामीटर के आधार पर हम किसी भी सम्प्रदाय में जायें, किसी भी घर में जायें अथवा किसी विद्वान के पास जायें, यह थर्मामीटर बता देगा कि यहाँ माया है, भगवान् की कृपा नहीं है क्योंकि जिन पर भगवान् की कृपा होती है, वे माया को पार कर जाते हैं और कुत्ते तथा सियार के भोजन स्वरूप इस शरीर के प्रति उनके अन्दर मैं-मेरापन की बुद्धि

समाप्त हो जाती है। यह ममाहं बुद्धि (मैं-मेरापन की बुद्धि) ही संकीर्णता है। साधुओं में 'मेरापन' इस रूप में घुसा रहता है कि यह मेरा शिष्य है, मेरी शिष्या है। गृहस्थियों में 'मेरापन' का स्वरूप होता है – मेरा बेटा, मेरी बेटी। गृहस्थियों में उनके सम्बन्धियों का विशाल रूप होता है – चाचा, ताऊ, काका आदि। उसी प्रकार साधुओं में भी यह सम्बन्ध चाचा गुरु, काका गुरु, नाती चेला आदि के रूप में चलता ही रहता है, वह 'मेरा-तेरा' किसी न किसी रूप में प्रगट हो जाता है। इससे समाज का नाश होता है, व्यक्ति का नाश होता है, धर्म का नाश होता है, नामापराध होता है और भक्तापराध होता है, विभाजन होता है, विभाजन से मनुष्य शक्तिशाली नहीं रहता, शक्तिहीन हो जाता है, समाज शक्तिहीन बनता है। अंग्रेजी में भी कहा गया है – United we stand, divided we fall. संगठन ही शक्ति है।

"संघौ शक्तिः कलौ युगे।" लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि ये सब भाषण करने वाला ही स्वयं कमजोर बन जाता है। एकता बड़े लोगों में होना चाहिए, जब बड़े प्रतिष्ठित लोग एक होकर दिखाएँगे तब छोटे लोग भी एकता सीखेंगे। संकीर्णता ऊपर से चलती है, एक संकीर्ण आदमी बहुतों को संकीर्ण बना देता है। संकीर्णता की बीमारी ऊपर से चलती है।

"यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः"।

(श्रीमद्भगवद्गीताजी ३/२१)

अगर बड़ा आदमी 'तृणादपि सुनीचेन' के सिद्धान्त पर चलेगा तो नीचे वालों को अपने-आप ही छोटा बनना पड़ेगा। इसलिए यह संकीर्णता की बीमारी ऊपर से चलती है, नीचे से नहीं चलती है; चाहे शरीर की बीमारी हो और चाहे मन की बीमारी हो। गुरुजी संकीर्ण हैं तो शिष्य भी संकीर्ण होगा। विहारिनदेव जी ने कहा है – **"जाको गुरु भिखारिया शिष्य कनौड़ो।"** जिसका गुरु भिखारी है, उसका शिष्य अत्यन्त दरिद्र होगा।(कूड़ेखाने से प्लास्टिक बीनने वाला कनौड़ा होगा।)

इस तरह यह संकीर्णता की बीमारी ऊपर से चलती है।

अपनी अहंता की रक्षा करना गलत है। इसका मतलब भगवान् की कृपा हमारे ऊपर नहीं है। यह शरीर क्या है, कुत्ते और सियार का भोजन है, लाश को अगर बिना दाह-संस्कार के यूँ ही डाल दिया जाये तो इसे कुत्ते और सियार खा जायेंगे। इस शरीर का वास्तविक स्वरूप यही है कि यह कुत्ते और सियार का भोजन है। इस कुत्ते और सियार के भोजन में 'ममाहं बुद्धि' होना, 'मैं-मेरापन' होना माया है। जिसकी बुद्धि में शरीर के प्रति 'मैं-मेरापन' नहीं है, उस पर भगवान् की कृपा हो गई है। शंकराचार्यजी ने लिखा है कि किसी विद्वान के पास डण्डा लेकर जाओ और उसके पास डण्डा उठाओ तो वह भागेगा, इसी प्रकार कुत्ते के पास डण्डा लेकर दिखाओ तो वह भागेगा, इस प्रकार एक विद्वान और कुत्ते में क्या अन्तर है ? कोई अन्तर नहीं है। देहाभिमान के धरातल पर दोनों एक हैं। जब तक जीव में देहाभिमान है तब तक माया है और देहाभिमान नहीं है तो भगवान् की कृपा है; यह शास्त्रों का प्रमाण है। आचार्यों ने यही कहा; ब्रह्माजी ने भी यही बताया कि भगवान् की कृपा को नापने का एकमात्र पैमाना यही है कि हमारी 'ममाहं बुद्धि' कितनी घट गई है और ममाहं बुद्धि (अहंता-ममता) बढ़ रही है तो इसका मतलब कि माया की कृपा बढ़ रही है, हम माया की ओर बढ़ रहे हैं। भले ही हम माला फेर रहे हैं या पाठ कर रहे हैं या कुछ भी साधन कर रहे हैं, एकमात्र तराजू या थर्मामीटर यही है कि इस कुत्ते और सियार के भोजन नश्वर 'शरीर' से 'ममाहं बुद्धि' हट जाए। इसका मतलब कि उस व्यक्ति पर भगवान् की कृपा हो गई। संसार के जितने भी जीव हैं, सब इसी में मर रहे हैं, चाहे विद्वान है, मूर्ख है, बूढ़ा है, जवान है अथवा स्त्री या पुरुष है और इसीलिये किसी भी धर्म की सिद्धि नहीं हो रही है।

दीक्षा क्या है ? केवल गुरु के पास जाकर मंत्र ले लिया, यही दीक्षा नहीं है। दीक्षा का सच्चा स्वरूप है –

"दिव्यं भावं यतो दद्यात् क्षिणोति दुरितानि च।
अतो दीक्षेति सा प्रोक्ता सर्वारम्भ विशारदैः" ॥

(नारदपुराण ६४/२)

गुरु दिव्य भावनाओं को देता है और उन भावनाओं से पाप नष्ट हो जाता है। दिव्य भाव की जगह अगर संकीर्ण भावनायें प्रदान की गईं तो विनाश हो जाता है। इस बात का निरूपण श्रीमद्भागवत में किया गया है –

जनो जनस्यादिशतेऽसतीं मतिं यया प्रपद्येत दुरत्ययं तमः।

(श्रीमद्भागवतजी ८/२४/५१)

जब अज्ञानी व्यक्ति गुरु बन जाता है तो असत बुद्धि का दान करता है, उससे दीक्षा लेने वाला मनुष्य फिर ऐसे अंधकार में पहुँच जाता है कि फिर उससे बाहर नहीं निकल पाता। इसलिए ऐसी स्थिति में भगवान् को गुरु मान लेना चाहिए। राजा सत्यव्रत भगवान् से कहते हैं कि आप जीव को अव्यय ज्ञान देने वाले हैं। इस श्लोक को कहने पर कुछ लोग कहने लगे कि आप तो गुरु दीक्षा का विरोध कर रहे हैं। हमने (बाबाश्री ने) कहा – हम तो गुरु-दीक्षा का विरोध नहीं कर रहे हैं। यह बात तो राजा सत्यव्रत द्वारा भगवान् के सामने कही जा रही है। तुमको यह बात अनुकूल नहीं मालूम पड़ती क्योंकि तुम्हारी भावनायें संकीर्ण लोगों के विचारों से प्रभावित हैं और तुम भगवान् के सामने कही जा रही बात को नहीं मान रहे हो। हम गुरु दीक्षा का खण्डन तो नहीं कर रहे हैं लेकिन वस्तुतः होता क्या है कि मनुष्य संकीर्ण बन जाता है। भगवान् शंकर ने भी कहा है –

उमा राम सम हित जग माहीं।
गुरु पितु मातु बन्धु प्रभु नाहीं॥

(श्रीरामचरितमानसजी, किष्किन्धाकाण्ड - १२)

हे उमा ! भगवान् के समान हितैषी गुरु भी नहीं हो सकता, इसका मतलब यह नहीं है कि महादेवजी या तुलसीदासजी ने गुरु का खण्डन कर दिया; वे तो यह कह रहे हैं कि भगवान् के समान हित न तो गुरु करता है, न माता और न पिता, इसका मतलब यह नहीं कि अब माता-पिता का भी खण्डन हो गया। वास्तविक स्थिति बतायी जा रही है कि जब तक जीव में स्वार्थ है, अहं है तब तक वह सुहृद (सच्चा हितैषी) नहीं बन सकता। हर माँ चाहती है कि बेटा हमारी बात माने। हर स्त्री चाहती है कि पतिदेव हमारी बात मानें, माता-पिता की नहीं और इसीलिये वह अपने सास–ससुर से अलग हो जाती है। बस यही विकृति है संसार में मेरेपन की। कबीरदास जी कहते हैं –

मात कहत यह पुत्र हमारा, बहन कहे भाई मेरा।
भाई कहे यह भुजा हमारी, नारी कहे नर मेरा॥

सभी लोग संसार में मेरा-मेरा कहते हैं। बहन कहती है कि तू मेरा भाई है, अतः मेरा बनकर रह। स्त्री कहती है कि तू मेरा पति है, मेरे अतिरिक्त किसी और की बात मत मान। माँ कहती है कि तू मेरा बेटा है। संसार में इसी मेरेपन का विवाद है, सब जगह ममाहं बुद्धि है और कुछ नहीं।

यही समस्या साधुओं, भक्तों और विद्वानों के समाज में भी है, ये लोग अपने मान-सम्मान का बहुत ध्यान रखते हैं। सारी दुनिया में सभी जगह केवल मैं-मेरा का झगड़ा है। गृहस्थियों में, साधु-समाज में, विद्वानों में मैं-मेरा की समस्या है। गुरु-शिष्य तक में विवाद हो जाता है और उनके बीच मुकदमाबाजी होती रहती है। सम्प्रदायों में 'मैं-मेरेपन' का विवाद है; वहाँ के अधिकारी कहते हैं कि हम इस सम्प्रदाय के आचार्य हैं, हम इस मन्दिर के अध्यक्ष हैं, हम जी.बी.सी. हैं, हमारी आज्ञा की अवहेलना कैसे की गई। हमारी आज्ञा का उल्लंघन करने वाले को हमारे सम्प्रदाय से, हमारी संस्था से निष्काषित किया जाता है। ये क्या है ? यह केवल मैं-मेरेपन का झगड़ा है और कुछ नहीं है। शंकराचार्य जी ने लिखा है कि जैसे एक गँवार पशु देहाभिमान के तराजू पर एक है, उसी प्रकार चारों वेदों का विद्वान भी देहाभिमान के तराजू पर एक है। जिस प्रकार कुत्ते को डंडा दिखाओ तो भागता है, उसी प्रकार चारों वेद का विद्वान भी डंडा दिखाए जाने पर भागता है। इसलिए सच्चा भक्त कौन है, जो सबसे छोटा है, वह सच्चा भक्त है। प्रह्लाद के ऊपर हिरण्यकश्यपु ने अनेकों भीषण अत्याचार किये, फिर भी उनकी मृत्यु नहीं हुई। उन्होंने कहा – पिता जी ! आप मुझे मार नहीं सकते हैं क्योंकि मेरे हृदय में पाप नहीं है। सबसे बड़ा पाप क्या है ?

"पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।"

यह रामचरितमानस की प्रसिद्ध चौपाई है। आजकल के रसिक रस में ऐसा डूब गये हैं कि रामायण के नाम से चिढ़ जाते हैं। लेकिन वास्तविकता यह है कि तुम जो दूसरों में अभाव करते हो और कराते हो, यह तुमको श्रीहीन करता है, इस अभाव दृष्टि के कारण तुमको रस नहीं मिलने वाला, तुम भले ही अपने रसिकपने का कितना ही विज्ञापन क्यों न कर लो। जब तक कषाय है तब तक भगवान् नहीं मिलेंगे, भगवान् का रस नहीं मिलेगा।

पूर्वजन्म में आकाशवाणी के माध्यम से भगवान् ने नारदजी से कहा –

हन्तास्मिञ्जन्मनि भवान्न मां द्रष्टुमिहार्हति।

अविपक्वकषायाणां दुर्दर्शोऽहं कुयोगिनाम् ॥

(श्रीभागवतजी १/६/२२)

'तुम मेरे दर्शन कषाय नष्ट होने के बाद करोगे।'

जब तक व्यक्ति कुयोगी है, उसमें कषाय हैं, वह कितना भी अपनी प्रशंसा करे, सब झूठ है, न उसमें रस है, न प्रेम है फिर भगवान् की प्राप्ति तो हो ही कहाँ से सकती है। तुमने योग का ढोंग कर रखा है लेकिन वस्तुतः तुम कुयोगी हो। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि अनर्थ हैं, कषाय हैं।

रसिक कौन है, महावाणी में लिखा है –

"झूठ क्रोध निन्दा तजि दे।"

जो झूठ, क्रोध और निन्दा का त्याग कर देता है, वह रसिक है। तुम झूठ बोलते हो और अपनी प्रशंसा करते हो, क्रोध करते हो, द्वेष करते हो तो तुम्हारे हृदय में रस कहाँ से आ जायेगा, तुम रसिक कैसे बन सकते हो ? संकीर्णता की हालत यह है कि हम जब ब्रज में पहली बार आये और वृन्दावन में एक रसिक संत का दर्शन करने गये तो वह बोले कि हमारे सम्प्रदाय में प्रिया-प्रियतम के जिस नित्य-विहार का वर्णन किया गया है, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं है। हमारे यहाँ छः प्रकार का नित्य-विहार है। एक प्रकार का नित्य-विहार तो वह है कि प्रिया-प्रियतम शैय्या पर विहार कर रहे हैं और शैय्या से नीचे ही नहीं उतरते। दूसरा नित्य-विहार यह है कि वे शैय्या से नीचे भी उतरते हैं और सखियों से बात भी करते हैं। इस प्रकार से उन्होंने छः प्रकार का नित्य-विहार विस्तार से बताया।

'सतत श्रीइष्ट-चिंतन' ही अनन्यता

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (३०/१२/२०१४) से संकलित

अनन्यता (अनन्य शरणागति) के बिना भगवान् नहीं मिलते, वह 'अनन्यता' जब संकीर्णता में बदल जाती है तो हानिकारक हो जाती है। लोग अनन्यता का मतलब केवल इतना ही समझते हैं कि हम एक सम्प्रदाय के अनुगत हैं, उसी के अनुसार चलेंगे और कुछ नहीं करेंगे। इससे संकीर्णता आती है। सच्चे अनन्य थे महाराज अम्बरीष जी, जिनके लिए भगवान् ने अपने गुरु दुर्वासा जी को सुदर्शन चक्र से पीड़ित किया। यह बात उन्होंने स्वयं दुर्वासा जी से कही।

यह इसलिए बताया जा रहा है कि वास्तविक अनन्यता के बिना मनुष्य संकीर्णता में फँस जाता है। साधु बनने के बाद भी वह संकीर्ण बन जाता है। श्रीमद्भागवत में स्वयं भगवान् ने दुर्वासा जी से कहा –

अहं भक्तपराधीनो हि अस्वतंत्र इव द्विज।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥
नाहं आत्मानमाशासे मद्भक्तैः साधुभिर्विना।
श्रियं चात्यन्तिकीं ब्रह्मन् येषां गतिः अहं परा ॥

(श्रीभागवतजी ९/४/६३,६४)

दुर्वासा जी ! मैं भक्तों के पराधीन हूँ। किसी सम्प्रदाय विशेष में दीक्षा लेने से मनुष्य अनन्य नहीं बनता। अनन्य कैसे बनता है ? हम गौड़ीय हैं, हम निम्बार्की हैं, हम अमुक सम्प्रदाय के हैं, ये अच्छी बात है लेकिन अनादिकाल से जो अनन्यता चली आ रही है, उस समय कोई सम्प्रदाय नहीं था। भगवान् कहते हैं मैं भक्तों के आधीन हूँ, स्वतंत्र नहीं बल्कि उनका गुलाम हूँ। कैसे भक्त, कैसे साधु, लाल-पीला कपड़ा वाले नहीं 'साधुभिर्ग्रस्तहृदयो' ऐसे साधु जो भक्त हैं। वेषधारी साधु नहीं जो सच्चे भक्त हैं, भगवान् कहते हैं मैं उनके अधीन रहता हूँ और इतना आधीन रहता हूँ कि उनके बिना मैं अपने को भी कुछ नहीं समझता, ऐसे भक्तों, संतों के बिना मैं जीवित नहीं रह सकता और मैं लक्ष्मी को भी नहीं चाहता हूँ। अव प्रश्न हुआ कि भगवान् लक्ष्मी जी को भी नहीं चाहते और अपने को भी नहीं चाहते जिन भक्तों के बिना, तो वे भक्त कैसे होते हैं ? वे किस सम्प्रदाय के होते हैं ? सन्यासी होते हैं कि उदासी होते हैं।

इसका उत्तर ये है कि उस समय ये सम्प्रदाय नहीं थे, फिर कैसे भक्त होंगे ? भगवान् बोले – 'येषां गतिरहं परा'

जिनकी परागति मैं ही हूँ, ऐसे भक्त जिनका किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बन्ध नहीं है, किसी विशेष वस्त्र से सम्बन्ध नहीं है, किसी वेष से सम्बन्ध नहीं है, किसी जाति से सम्बन्ध नहीं है, जिनकी परागति एकमात्र मैं हूँ। परागति क्या है ? परागति वह नहीं है जैसे अन्य सम्प्रदायों में बन्धन लगा दिया जाता है कि तुम केवल अपने आचार्यों की वाणी पढ़ो, केवल महावाणी पढ़ो, केवल केलिमाल पढ़ो, केवल हरिवंश जी की वाणी पढ़ो, ये सब बन्धन वहाँ नहीं हैं। परागति जब हम ठीक से सामझेंगे तभी समझ पायेंगे कि अनन्यता क्या है ?

ये दारागारपुत्राप्तान् प्राणान् वित्तमिमं परम्।
हित्वा मां शरणं याताः कथं तान् त्यक्तुमुत्सहे॥

(श्रीभागवतजी ९/४/६५)

वे भक्त अपनी स्त्री, मकान, बेटा-बेटी, माता-पिता, प्राण (जीवन) तथा धन एवं यह सारा संसार और परलोक छोड़ देते हैं और फिर मेरी शरण में आते हैं; इसको कहते हैं सच्चा अनन्य भक्त। हम साधु बनकर धन रखते हैं तो अनन्य नहीं हैं, भगवान् के अलावा अन्यत्र प्रेम रखते हैं तो अनन्य नहीं हैं, संसार में व्यवहार रखते हैं, संसार से सुख की आशा रखते हैं तो अनन्य नहीं हैं। अनन्यता क्या है ? यह लोग समझ नहीं पाते। किसी सम्प्रदाय विशेष में दीक्षा लेना अनन्यता नहीं है।

समस्त कामनाओं का त्याग करना 'अनन्यता' है। स्त्री-पुत्र, धन-सम्पत्ति के प्रति प्रेम का त्याग यह 'अनन्यता' है। 'अनन्यता' उपासना की जान है, रसिकता की जान है और अनुभूतियों की जान है। श्रीभगवान् ने कहा है –

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(श्रीगीताजी ९/२२)

"तू अनन्य भाव से मेरा चिन्तन कर, तेरा योग-क्षेम मैं धारण करूँगा।" इस श्लोक का प्रमाण है - सारा महाभारत। विभिन्न विषम परिस्थितियों में भगवान् ने पाण्डवों की रक्षा की। पाण्डवों के सारे जीवन का प्रमाण है यह श्लोक। जैसे – जब भीष्म ने प्रतिज्ञा की थी कि मैं इन पाँच बाणों से पाण्डवों का वध करूँगा, उस समय श्रीकृष्ण ने रक्षा किया। जब कर्ण ने नारायणास्त्र का पांडवों के ऊपर संधान किया तब प्रभु ने रक्षा की, जब भीम ने छल से दुर्योधन को मारा तो बलरामजी क्रोध में आ गए और भीम को मारने दौड़े, तब श्रीकृष्ण ने उनकी रक्षा की, उत्तरा के गर्भ पर अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र छोड़ा, तब उन्होंने उत्तरा के गर्भ की रक्षा की। इसी तरह अनेकों जगहों पर श्रीकृष्ण ने पांडवों का योगक्षेम वहन किया क्योंकि वह अनन्य चिंतन करते थे और यही सच्ची अनन्यता है।

आजकल के लोग कहते हैं कि हम अमुक सम्प्रदाय में दीक्षित हैं, अतः हम अपने सम्प्रदाय की वाणी, पोथी का पाठ करते हैं, इसलिए हम अनन्य हैं। कोई कहता है हम वल्लभ-सम्प्रदाय से हैं अतः हम केवल महाप्रभुवल्लभाचार्यजी कृत 'सुबोधिनी' (श्रीमद्भावत की टीका) ही पढेंगे, अन्य किसी सम्प्रदाय का ग्रन्थ नहीं पढ़ेंगे। कोई कहता है हम राधावल्लभी हैं तो हम अपने आचार्यों का ग्रन्थ 'हित चतुरासी' पढ़ेंगे और कुछ नहीं पढ़ेंगे। कोई कहता है कि हम तो हरिदासी हैं, हम केवल 'केलिमाल' स्वामीजी के पद गाते हैं, अन्य सम्प्रदाय के महापुरुषों के पद हम नहीं गाते हैं। निम्बार्की कहते हैं कि हम तो केवल 'महावाणी' के पद गाते हैं और अन्य सम्प्रदायों के ग्रन्थ हम देखते भी नहीं, इस प्रकार हम अनन्य हैं। वस्तुतः इस तरह अनन्य नहीं बना जाता है। अब हम अपने आप को अनन्य बताते हैं और दूसरी तरफ हमारा चिंतन चल रहा है कि कहाँ से धन मिले अथवा बढ़िया भोजन, लड्डू-पेड़ा कैसे मिले अथवा चिन्तन चल रहा है कि हमारे स्त्री-पुत्र का जीवन-निर्वाह कैसे होगा ? ऐसे व्यक्ति को अनन्य नहीं कहा जाता है। चिन्तन अनन्य होना चाहिए, वही सच्ची अनन्यता है।

'राधासुधानिधि' में भी लिखा कि राधारानी का प्रेम कब मिलेगा जब –

"दूरादपास्य स्वजनान् सुखमर्थकोटिं
सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः॥"

(श्रीराधासुधानिधि ३२)

बहुत से लोग अपने आपको राधारानी का भक्त मानते हैं किन्तु अगर तुम्हारा प्रेम परिवार और धन में है तो तुम

राधारानी के भक्त नहीं हो। स्वजन, स्त्री, पुत्र, माता-पिता आदि का दूर से त्याग कर दो अर्थात् उनमें आसक्ति बिल्कुल ही न हो; करोड़ों प्रकार के अर्थों का त्याग कर दो, धन-सम्पत्ति, जमीन-जायदाद आदि में भी प्रेम है तो उसे छोड़ दो। अन्य साधनों से भी निराश हो जाओ, उसके बाद तुम राधारानी की चरणरज के उपासक बन पाओगे। भगवान् कहते हैं कि ऐसे अपने अनन्य भक्तों का त्याग मैं कैसे कर सकता हूँ क्योंकि उनके हृदय में मैं बँधा हुआ हूँ। हम लोगों के हृदय में तो लड्डू-पेड़ा की आसक्ति है तो हम अनन्य नहीं हैं, संग्रह है तो हम अनन्य नहीं हैं। भगवान् के अनन्य भक्त समदर्शी होते हैं, भेदबुद्धि वाले नहीं होते, वे भगवान् को वश में रखते हैं, जैसे सती स्त्री अपने सत्पति को वश में रखती है। भगवान् कहते हैं कि ऐसे भक्तों के मैं आधीन रहता हूँ, ऐसे भक्तों को ही अनन्य कहा जाता है। हम चाहते हैं कि लोग अनन्य भक्त बनें, एक भी व्यक्ति अगर अनन्य भक्त बनता है तो उससे सारे देश का कल्याण होता है।

"स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते" ॥

(श्रीभागवतजी ७/१४/२७)

वह देश पवित्र है जहाँ सत्पात्र अर्थात् अनन्य भक्त रहते हैं, उसके कारण देश पवित्र बन जाता है। अनन्यता क्या है ?

भगवान् के अलावा संसार में कहीं भी अनन्यता रहेगी तो नष्ट हो जाओगे। किसी का भी अपने परिवार में प्रेम है तो एक दिन नष्ट हो जाएगा, अनन्य नहीं बन सकता, चाहे वह साधु है, संत है, रसिक है, किसी साधु की रसिक के रूप में ख्याति है लेकिन जब तक उसका धन-संपत्ति में प्रेम है, अपने विशेष वर्ग में प्रेम है तो वह अनन्य नहीं है। लोग सम्प्रदाओं में ही प्रेम रखते हैं और दूसरे को भी सम्प्रदाय विशेष से जोड़ना चाहते हैं, क्यों ? सीमित करने के लिए कि हमारा ही प्रभाव रहे, इसको संकीर्णता कहते हैं। अनन्यता यह है कि केवल भगवान् में प्रेम रहे और मैं-मेरापन जहाँ बिल्कुल भी न रहे। जहाँ मैं-मेरापन है, वहाँ माया है –

यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे
ममाहं इति ऊढ दुराग्रहाणाम्।
पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां
भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम् ॥

(श्रीभागवतजी ३/५/४३)

मैं-मेरापन की बुद्धि घर-परिवार में, सम्पत्ति में कहीं भी है तो भगवान् बहुत दूर हैं, चाहे तुम अपने आपको अनन्य मानो लेकिन वस्तुतः तुम कुछ नहीं हो। जिसके अन्दर भेद बुद्धि है, चाहे वह कितना भी ऊँचा विद्वान् महात्मा है लेकिन वह सन्त नहीं है। उसके संग से मनुष्य संकीर्ण ही बनेगा और भेदबुद्धि सीखेगा। उसका दण्ड क्या है ? उस जीव को नारकीय गति प्राप्त होती है, आज साधु-वैष्णव समाज तेजहीन क्यों है ? भेदबुद्धि के कारण। लोग सम्प्रदायों में दीक्षा देने के बाद केवल भेदबुद्धि सिखाते हैं, अन्यत्र अभाव सिखाते हैं। अपने सम्प्रदाय व आचार्यों में भाव रखो लेकिन अन्य सम्प्रदायों, उनके आचार्यों और महापुरुषों में अभाव मत रखो। आज के गुरु अन्यत्र अभाव कराकर अपने अनुयायियों से कहते हैं कि हमारे ही सम्प्रदाय की वाणी-पोथियों और ग्रन्थों को पढ़ो और अन्य सम्प्रदाय की वाणियों, उनके ग्रन्थों को मत पढ़ो। इस अभाव का परिणाम क्या होता है ? जय-विजय जो भगवान् के पार्षद हैं, उन्हें भी अभाव करने के कारण ही सनकादिकों के शाप से वैकुण्ठ से नीचे आसुरी योनि में आना पड़ा था –

तद्वाममुष्य परमस्य विकुण्ठभर्तुः
कर्तुं प्रकृष्टमिह धीमहि मन्दधीभ्याम्।
लोकानितो व्रजतमन्तरभावदृष्ट्या
पापीयसस्त्रय इमे रिपवोऽस्य यत्र ॥

(श्रीभागवतजी ३/१५/३४)

आज साधु-वैष्णव समाज में यही चल रहा है। सनकादिकों ने जय-विजय को शाप देते हुए कहा था कि तुम्हारी दृष्टि में अभाव आ गया है, तो तुमको काम, क्रोध और लोभ कभी नहीं छोड़ेंगे। इसी प्रकार हम लोग भी परस्पर वैष्णवों में अभाव करते रहेंगे तो काम, क्रोध और लोभ से सदा ग्रसित होते रहेंगे चाहे ऊपरी वेष साधु-वैष्णव का कितना ही बढ़िया क्यों न बना लें।

सच्ची सावधानी 'सर्वात्म-शरणागति'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (७/१/२०१५) से संकलित

श्रीमद्भागवतजी में श्रीभगवान् ने अपनी भक्ति व सती स्त्री की पद्धति एक ही बतायी है। भगवान् ने दुर्वासाजी से कहा है –

मयि निर्बद्धहृदयाः साधवः समदर्शनाः।
वशीकुर्वन्ति मां भक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा॥

(श्रीभागवतजी ९/४/६६)

जैसे 'सती स्त्री' सत्पति को वश में कर लेती है, वैसे ही जो हमसे प्रेम करता है, वह मुझे वश में कर लेता है और मुझ सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र को भी नचा देता है। सत्स्त्री की शैली क्या है ?

एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा॥

(श्रीरामचरितमानसजी, अरण्यकाण्ड ५)

शरीर, वाणी और मन – तीनों एक हो जाते हैं तब उसको अनन्यता कहते हैं और तीनों एक नहीं हैं तो अनन्यता नहीं है। हम केवल नाम रख लें कि हम अनन्य हैं लेकिन यह गलत पद्धति है। अनन्यता क्या है? इसको समझना चाहिए। हम अमुक सम्प्रदाय के हैं, अतः हम अपने सम्प्रदाय के ही पद को गायेंगे, अन्यत्र सम्प्रदाय के आचार्यों के पद को नहीं गायेंगे, यह अनन्यता नहीं है वरन् संकीर्णता है। अनन्यता क्या है ? **'कायँ बचन मन पति पद प्रेमा॥'** इसी बात को वनगमन करते समय लक्ष्मणजी ने प्रभु राम से कहा कि आप हमारा त्याग नहीं कर सकते –

मन क्रम बचन चरन रत होई।
कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई॥

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड - ७२)

मन, कर्म, वचन से जिसका आपके चरणकमलों में प्रेम है, क्या आप उसका परित्याग कर सकते हैं ? श्रीरामजी निरुत्तर हो गये और लक्ष्मणजी से बोले – 'चलो हमारे साथ।' इसी को रसिकता कहते हैं।

श्रीनागरीदासजी ने भी कहा है –

बड़ोई कठिन है भजन ढिंग ढरिबौ।
तमक सिंदूर मेलि माथे पर साहस सिद्ध सती कौ सौ जरिवौ॥
रण के चार घायल ज्यौं घूमें मुरै न गरूर सूर कौ सौ लरिवौ।
नागरीदास सुगम जिन जानों श्री हरिवंश पंथ पग धरिवौ॥

भजन करना अत्यन्त कठिन है, अनन्यता कहीं भी है तो मन, वाणी और कर्म तीनों को लेकर चलती है, जैसे श्रीराधासुधानिधि में यही कहा है –

उच्छिष्टामृतभुक्तवैव चरितं शृण्वंस्तवैव स्मरन्
पादाम्भोजरजस्तवैव विचरन् कुञ्जांस्तवैवालयान्।
गायन् दिव्यगुणांस्तवैव रसदे पश्यंस्तवैवाकृतिम्
श्रीराधे तनुवाङ्मनोभिरमलैः सोऽहं तवैवाश्रितः॥२४०॥

हम राधारानी के आश्रित तभी माने जायेंगे जब शरीर, मन, वाणी तीनों से उनके अनन्य आश्रय में होंगे और ये तीनों यदि दोषयुक्त हैं तो राधारानी के आश्रित नहीं हैं, जैसे – श्रीहितहरिवंशजी ने कहा है –

रसना कटौ जु अन रटौं, निरखि अन फुटौ नैन।
श्रवण फुटौ जो अन सुनौं, बिनु राधा यश बैन॥

(श्रीहित चतुरासी)

वे आँखें फूट जायें जो नश्वर देह में सुन्दरता देखती हैं, वह जीभ कट जाये जो व्यर्थ चर्चा करती है, वे कान फूट जायें जो अन्य वार्ताओं को सुनते हैं, ऐसे भक्त को अनन्य कहा गया है। हम जैसे लोग क्या करते हैं, भीतर से तो हमारा चित्त दूषित रहता है और घोषणा करते हैं कि हम अनन्य भक्त हैं। स्वयं श्रीभगवान् ने भी कहा है –

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(श्रीगीताजी ९/२२)

तुम अनन्य बन जाओ, केवल अनन्य नाम मत रखो अपितु चिन्तन अनन्य करो तब मैं तुम्हारे सभी योगक्षेम को धारण करूँगा। हम जैसे लोग केवल ऊपरी तौर से अपने को अनन्य घोषित करते हैं – हम अनन्य भक्त हैं, हम अनन्य रसिक हैं। वस्तुतः तो हम दुरात्मा हैं। हमारा मन कहीं है, वाणी और कर्म अन्यत्र हैं।

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनः।
मनस्यन्यं वचस्यन्यं कर्मण्यस्यन्यं दुरात्मनः॥

जिसके मन, वाणी और कर्म एक से हैं, वह है सदाचारी पुरुष और जिसके मन, वाणी और कर्म पृथक-पृथक मार्ग पर हैं, वह है दुरात्मा पुरुष। वर्तमानकालीन हम जैसे लोग

केवल नाम रख लेते हैं कि हम अनन्य हैं जबकि हमारे मन, वाणी और कर्म परस्पर विपरीत दिशा में होते हैं। इसलिए अनन्य कर्म की सिद्धि नहीं होती है, क्यों नहीं होती है ? इसके लिए यह समझें कि पतिव्रता का पातिव्रत्य कैसे नष्ट होता है ?

छन सुख लागि जनम सत कोटी।
दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥

(श्रीरामचरितमानसजी, अरण्यकाण्ड - ५)

क्षणिक-सुख के लिए वह परपुरुष से संसर्ग करती है और ऐसा करने पर करोड़ों जन्मों की हानि हो जाती है और उसे रौरव नरक की प्राप्ति होगी। इसी प्रकार यदि कोई नाममात्र का अनन्य है तो उसे नारकीय गति की प्राप्ति होगी, चाहे वह तिलक लगाये, छाप लगाये, माला फेरे, निश्चित नरक में जाना पड़ेगा।

किन्तु आज समाज में ऐसा कहने का साहस किसी का नहीं है। यदि भेदबुद्धि से देखोगे तो निश्चित ही नारकीय यातना भोगनी पड़ेगी -

द्रक्ष्यन्त्यघक्षतदृशो ह्यहिमन्यवस्तान्
गृध्रा रुषा मम कुषन्त्यधिदण्डनेतुः॥

(श्रीभागवतजी ३/१६/१०)

अथवा

सूरदास भगवन्त वदत हैं, मोहि भजै पै जमपुर जैहैं।

(श्रीसूरदासजी)

मन, वचन और कर्म यदि साम्य स्थिति में होंगे, तभी उपासना सिद्ध होगी, 'भक्ति' सिद्ध होगी नहीं तो नहीं होगी। यही गीता, भागवत में बताया गया है और यही रसिकों ने कहा है। श्रीमद्भागवतजी में कपिल भगवान् ने कहा है –

देवानां गुणलिङ्गानां आनुश्रविककर्मणाम्।
सत्त्व एवैकमनसो वृत्तिः स्वाभाविकी तु या॥

(श्रीभागवतजी ३/२५/३२)

ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय और मन की वृत्ति भगवान् वासुदेव में रहे, बस यही भक्ति है। इसके विपरीत यदि हम शास्त्राध्ययन करके विद्वान् बन जायें और खूब प्रवचन करें परन्तु स्वाद-लोलुप हैं तो हमारी भक्ति कैसे सिद्ध हो सकती है ? अनन्य तो वही है जैसा कि भगवान् ने गीता में कहा है – मन, बुद्धि सब मेरे में लगा दो -

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्नयस्याध्यात्मचेतसा।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः॥

(श्रीगीताजी ३/३०)

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः॥

(श्रीगीताजी १२/८)

आजकल के प्रवचन कर्ता कहते हैं कि महापुरुषों को अधिकार है कि वे कुछ भी करें, सिद्ध पुरुषों को अधिकार है कुछ भी करें, उन्हें कोई पाप नहीं लगेगा; इस प्रकार से हमलोग समाज को गलत शिक्षा देते हैं अपने अवगुणों को ढकने के लिए। 'महापुरुष बनो' तब तो महापुरुष का अधिकार माना जाएगा लेकिन तुम महापुरुष हो कहाँ ? अभी तो तुम इन्द्रियतृप्ति में संलग्न हो। जब सभी 'इन्द्रियों और मन' की स्वाभाविकी वृत्ति भगवान् में समर्पित हो जाए, वह है भक्ति।

आधुनिक काल में हम जैसे लोग अपने को महापुरुष, महामण्डलेश्वर और जगद्गुरु घोषित कर देते हैं जबकि वस्तुतः हैं हम 'विषय-भोग के गुरु'। आजकल प्रायः ऐसा देखा जाता है कि रसिकों के स्थानों पर 'भाँग' का अत्यधिक सेवन किया जाता है। भाँग पीकर पद-गायन करने लगते हैं और नशे की मस्ती में कहते हैं – ओहो ! देखो, प्रिया-प्रियतम का आगमन हो गया। वास्तव में तो वहाँ प्रिया-प्रियतम नहीं अपितु 'भाँग का नशा' होता है। नशे की मस्ती में ये तथाकथित रसिक झूमते हैं और सोचते हैं कि प्रिया-प्रियतम के रस की हमें प्राप्ति हो गई। जिस प्रकार अफीमची लोग अफीम के नशे में काल्पनिक लोक में विचरण करते हैं और अनर्गल (व्यर्थ) प्रलाप करते हैं, उसी प्रकार हम जैसे लोग भी काल्पनिक सुख को अनुभव मान लेते हैं। वस्तुतः तो हम लोग क्षणभंगुर विषय-सुख के लिए कोटि जन्मों का विनाश कर देते हैं।

तीव्र भक्तियोग क्या है ?

तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम्।

(श्रीभागवतजी २/६/१०)

सभी इन्द्रियाँ और मन, बुद्धि आदि भगवान् में समर्पित हो

जायें, ऐसा होने पर पत्थर में से भगवान् का प्राकट्य होगा, जैसे 'नृसिंह भगवान्' प्रकट हुए। प्राचीनकाल के सन्यासी लोग गेरुआ रंग में अपने वस्त्र को रंगा करते थे। आजकल के सन्यासी ऐसा नहीं करते, उन्होंने कृत्रिम केसरिया रंग का आविष्कार कर लिया है, उसमें अपने बढ़िया वस्त्र को रंगकर सन्यासी बन जाते हैं, जबकि बिना गेरुआ रंग के संन्यास नहीं होता। श्रीमीराजी ने कहा है -

चालां वाही देस प्रीतम पावां, चालां वाही देस।
कहां तो कसूंभी सारी रंगावां, कहाँ तो भगवां भेस॥

(श्रीमीराबाईजी)

मीराजी भगवा वस्त्र पहनती थीं और आधुनिककाल की तथाकथित मीरा कृत्रिम रंग से रंगा केसरिया वस्त्र पहन लेती हैं, जैसे आजकल के सन्यासी पहनते हैं। भगवा रंग क्यों पहना जाता है ? उसे साबुन से धोने की आवश्यकता नहीं है। शरीर कितना भी मलिन हो लेकिन गेरुआ वस्त्र में कीड़े नहीं लगते। अब उस 'गेरुआ रंग' की आजकल के हम जैसे लोगों ने विकृतियाँ निकाल लीं। हर प्राचीन अच्छी वस्तु का वर्तमान समय के हम लोगों ने रूप ही बदल दिया है। स्वामी हरिदासजी के सम्प्रदाय में साधुओं के द्वारा टेढ़ी लकड़ी और छींट के वस्त्र का उपयोग किया जाता है, उसको धारण करके संत लोग हरिदासी-सम्प्रदाय के अनुगत माने जाते हैं। सीधा डंडा इसलिए वहाँ धारण नहीं किया जाता है क्योंकि उसके द्वारा किसी की हिंसा हो सकती है, लड़ाई-झगड़े में उसका प्रयोग किया जा सकता है, टेढ़ी लकड़ी होगी तो उससे किसी को मारा-पीटा नहीं जा सकता, किसी से झगड़ा नहीं किया जा सकता लेकिन आधुनिक समय में टेढ़ी लकड़ी का प्रयोग फैशन के तौर पर होने लगा। जो टेढ़ी लकड़ी और छींटदार वस्त्र पहनता है, उसी को श्रीस्वामीजी के सम्प्रदाय का अनुयायी मान लिया जाता है। छींट का वस्त्र वहाँ इसलिए प्रयुक्त किया गया होगा कि ताकि फैशन के लिए कोई बढ़िया वस्त्र न धारण करें। इसी तरह से निम्बार्क-सम्प्रदाय के अन्तर्गत काठिया बाबा का स्थान है, उनके यहाँ कोई महापुरुष हुए, वह काठ की कौपीन (लंगोटी) धारण करते थे। कपड़े की कौपीन फट जाती है, उसे धोना पड़ता है, बदलना पड़ता है। इसलिए वहाँ काठ की कौपीन का प्रयोग किया गया, इसी कारण से उनका नाम हुआ 'काठिया'। वर्तमानकाल में तो वह काठ की कौपीन एक फैशन के तौर पर चल पड़ी, लकड़ी की पेटी की तरह उसे कमर पर बाँधकर लोग काठिया बाबा बन जाते हैं; इसी तरह सभी जगह हम लोग विकृतियाँ निकाल लेते हैं, जैसे वकील मुकदमा जीतने के लिए क़ानून में से अपने बचाव के लिए नयी धारा निकाल लेता है, उसी प्रकार हम लोग भी अपने इन्द्रिय-तोषण हेतु अपने अवगुणों को ढकने के लिए नये रास्ते तलाश लेते हैं, जैसे हमें खीर खाना है तो कहेंगे कि आज रामजी की इच्छा है कि खीर बने। अब यह कामना रामजी की है कि तुम्हारी है। इसी प्रकार कहते हैं कि आज मौसम ठीक नहीं है अतः रामजी चाहते हैं कि गरम पकौड़ी का भोग लगे। अब यह रामजी चाहते हैं कि तुम्हारा मन चाहता है, ये सब विकृतियाँ हम लोग निर्मित कर लेते हैं जबकि अच्छे स्वादिष्ट भोजन का निषेध किया गया है। महापुरुषों ने कहा है – **'भालो ना खाइबे, भालो ना पहरिबे।'**

और वास्तविकता यह है कि सबसे बढ़िया पंगत साधु-समाज में ही होती है और हम लोग प्रतिदिन नई-नई पंगतों में सम्मिलित होने के लिए भ्रमण करते रहते हैं। रसिकों के लिए विहारिनदेवजी ने लिखा है –

खान-पान सुख चाहें अपने, प्रेम पदारथ छुयें न सपने।

(श्रीविहारिनदेवजी)

स्वादिष्ट भोजन के रसास्वादन की जब तक हृदय में कामना है तो प्रेम की प्राप्ति स्वप्न में भी संभव नहीं है, फिर भला जाग्रत में तो कहना ही क्या और जब प्रेम-प्राप्ति ही असंभव है तो रस की प्राप्ति फिर कैसे संभव हो सकती है। इन्द्रियों के तोषण से स्वप्न में भी भक्ति या प्रेम की प्राप्ति असंभव है। 'इन्द्रिय-तोषण' भक्ति नहीं बल्कि विकर्म है। श्रीमद्भागवत में भगवान् ऋषभ देवजी ने कहा है -

नूनं प्रमत्तः कुरुते विकर्म यदिन्द्रियप्रीतय आपृणोति।
न साधु मन्ये यतात्मनोऽयमसन्नपि क्लेशद आस देहः॥

(श्रीभागवतजी ५/५/४)

प्रमाद क्या है ? विकर्म। 'विकर्म' क्या है ? इन्द्रियतृप्ति के

लिए जो कर्म किया जाता है, वह है 'विकर्म'। तो प्रमाद से विकर्म होता है, इन्द्रियतोषण हेतु जो कर्म किया गया, वह प्रमाद है। इसलिए विकर्म नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे अवश्य जीव को जन्म-मरण के दारुण क्लेश की प्राप्ति होगी। महात्मा लोग कहते हैं कि 'तितली' क्या है ? वे कहते हैं कि 'तितली' पूर्व जन्म में स्त्री थी जो रंग-बिरंगे वस्त्र पहनकर अत्यधिक श्रृंगार करके रहती थी तो कामी लोग उसके साथ दुराचार करते थे, अब वही श्रृंगार-परायण स्त्री अगले जन्म में तितली बनती है तो वहाँ कीड़े-मकोड़े उसका भक्षण करते हैं। विकर्म का फल क्या है ? असत् शरीरों की प्राप्ति। उस विकर्म में आज हम जैसे साधु लोग फँस चुके हैं। एक बार 'राधारानी ब्रजयात्रा' के दौरान ब्रज का ही लीलास्थल 'आदिबद्री' पर पड़ाव हुआ; उसी दिन ब्रज चौरासी कोस की यात्रा के दौरान विरक्त मण्डल की यात्रा भी वहीं पहुँची। विरक्त मण्डल की यात्रा में मेवों का साग बनता था, यह देखकर 'राधारानी ब्रजयात्रा' में शामिल बहुत से यात्री उस यात्रा में सम्मिलित हो गये, कारण केवल एक ही था कि जहाँ 'राधारानी ब्रजयात्रा' में प्रसाद में दाल-रोटी बनती थी; वहीं विरक्त मण्डल की यात्रा में मेवों का साग और अन्य स्वादिष्ट व्यंजन बनते थे, अतः इसी लोभवश अधिकांश संत उन्हीं के दल में पहुँच गये; ये सब साधु-समाज की विकृतियाँ हैं, जिसे हमलोग अपने मन के अनुकूल भक्ति की परिभाषा देकर बदल देते हैं। इसीलिए वर्तमानकाल में वास्तविक भक्ति कहीं नहीं रह गयी है। वास्तविक प्रेम, वास्तविक रस कहीं नहीं है, यदि है तो केवल लड्डू-पेड़े या स्वादिष्ट व्यंजनों का रस। गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है –

जो मोहि राम लागते मीठे।
तो नवरस षटरस-रस अनरस, ह्वै जाते सब सीठे॥

(गोस्वामी तुलसीदासजी)

भोजन के छः रस और अन्य सभी सांसारिक रस फीके हो जाते, यदि मुझे राम की भक्ति का रस प्राप्त हो गया होता। अगर हम वास्तव में भक्त बनना चाहते हैं तो रूप गोस्वामीजी ने भक्ति की परिभाषा बताते हुए कहा है –

अन्याभिलाषिता शून्यं ज्ञान कर्माद्यना व्रतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्ति रुत्तमा॥

अन्य सभी अभिलाषायें सर्वथा शून्य हो जानी चाहिए, भक्ति की परिभाषा का भाषण तो हम इस प्रकार करते हैं– **'आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनम्'** लेकिन क्रिया में कृष्ण के अनुसार सेवा नहीं है, हमारी इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों के भोग में संलग्न हैं और समाज को हम उपदेश देते हैं। हम चाहे किसी भी सम्प्रदाय के अनुगत हों, आचार्यों ने इन्द्रिय-तोषण की आज्ञा कभी भी नहीं दी। आजकल लोग अपने को किसी सम्प्रदाय विशेष का बताते हैं और कहते हैं कि हम केवल अपने सम्प्रदाय के आचार्य का ही पद गायेंगे और उस सम्प्रदाय के आचार्यों के कुछ पद गाकर ही ये लोग अपने को 'रसिक' घोषित कर देते हैं और कहते हैं कि किसी अन्य सम्प्रदाय के पद को हम नहीं गा सकते और इस प्रकार ये आधुनिक रसिक 'संकीर्णता' में फँस जाते हैं। वस्तुतः यदि आप हरिदासी हैं तो स्वामीजी ने कहा है –

'मत बंछै, मत बंछै, मत बंछै, रे तिल तिल धन को'।

'तिल-तिल धन' की कामना क्यों करता है, 'तिल-तिल धन' क्या है ? यह सौ का नोट है, यह पाँच सौ का नोट है, यह एक हजार का नोट है, यही है तिल-तिल धन। स्वामीजी कहते हैं कि तू 'तिल-तिल धन' के लिए तरसता है, तो तुझे बिहारीजी कहाँ से मिलेंगे ? उन्होंने इसका निषेध किया है, उनके इस उपदेश का अनुसरण करने पर ही हम सच्चे हरिदासी, वास्तविक रसिक बन सकते हैं; केवल तुम कुछ पद गा लो और सोचो कि हम रसिक बन गये, ऐसा कैसे हो सकता है ? यदि तुम अपने को राधावल्लभी मानते हो तो हरिवंशजी महाराज ने कहा है –

तेरी सौं भैया कृष्ण गुन संचु।
कुत्सित वाद विकारहिं सुनु सिष सिब परधन परतिय बंचु॥

यदि कृष्ण-रस प्राप्त करना है तो पराये धन और परायी स्त्री का परित्याग कर दो। हरिवंश महाप्रभु की इस आज्ञा का यदि पालन करते हो तब तो तुम वास्तविक हरिवंशी हो अन्यथा हरिवंशी नहीं हो।

कबीरदासजी ने सबसे ज्यादा फटकार साधुओं को लगायी – **'कहत कबीर सुनो भाई साधो'** क्योंकि हम

लोग ही समाज को उपदेश करते हैं और हम लोग ही धर्मगुरु बनते हैं। उसी प्रकार स्वामी हरिदासजी ने भी साधुओं को फटकारा है।

लोग तौ भूलैं भूलैं भूलैं तुम जिनि भूलौ मालाधारी।

(केलिमाल सिद्धांत पद १६)

तुमने हाथ में माला ले ली और मस्तक पर तिलक लगा लिया परंतु वास्तविक वैष्णवता को भूलकर केवल इन्द्रिय तोषण में लगे हुए हो। हमारे (बाबाश्री के) बारे में लोग कहते हैं कि ये साधुओं की आलोचना किया करते हैं किन्तु यह आरोप गलत है। जो साधुओं की आलोचना करता है, वह तो निकृष्ट है, नारकीय है। हम साधु-समाज में फैली विकृतियों की आलेचना करते हैं। विकृतियों की आलोचना करना कल्याणप्रद होता है।

इसीलिए स्वामी हरिदासजी ने साधुओं को सचेत किया कि और कोई भूले तो भूले लेकिन तुमने हाथ में माला ले ली है और मस्तक पर तिलक लगा रखा है, तुम्हें तो समाज का पथ-प्रदर्शक होना चाहिए था, अब तुम क्यों अपने उद्देश्य को भूलते हो ? श्रीसूरदासजी ने भी कहा है –

कितै दिन हरि सुमिरन बिन खोये।
तिलक लगाये चले स्वामी बन विषयिन के मुख जोये॥

भगवान् के स्मरण बिना तुम्हारा जीवन व्यर्थ जा रहा है, हे तिलकधारी ! तिलक लगाकर तू स्त्रियों को देखता है, तिलक लगाकर तू सेठों की ओर देखता है, तिलक लगाकर तू विषयों की ओर दृष्टिपात करता है। तिलक क्यों लगा रखा है ? स्वामी बनने के लिए। स्वामीजी तिलक लगाकर दर्पण में अपना चेहरा देखते हैं कि तिलक ठीक लगा कि नहीं, हमारा चेहरा जँच रहा है या नहीं। स्वामी बनकर विषयी लोगों को और विषयों को देखते हो तो तुम्हारे तिलक को धिक्कार है; ऐसा सूरदासजी ने कहा और स्वामी हरिदासजी ने भी कहा कि हे मालाधारी ! वैष्णवता के विपरीत मार्ग पर चलने से तुम्हारी माला को धिक्कार है।

वर्तमानकालीन समाज में इन विकृतियों के सन्दर्भ में बोलने का किसी को भी साहस नहीं है और यदि कोई इस विषय पर बोलता है तो इसे साधु-निन्दा माना जाता है। तुलसीदासजी ने कहा है –

तुलसी देखि सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड – १६१)

सुन्दर साधु या वैष्णव वेष देखकर मूर्ख लोग प्रभावित हो जाते हैं, चतुर लोग प्रभावित नहीं होते। केवल बाहरी साधु या वैष्णव-वेष को देखकर मोहित होने वाले मूर्ख हैं। रामचरितमानस में तुलसीदासजी ने सबसे पहले कपटी मुनि का चरित्र वर्णन किया, कपटी मुनि के बाह्य वेष को देखकर राजा प्रतापभानु प्रभावित हो गया। इस कथा की प्रासंगिकता को लेकर उच्च कोटि के विद्वानों ने भी शंका की और कहा कि इस कथा को तुलसीदासजी ने व्यर्थ में ही लिख दिया, इसमें कोई रामचरित्र तो है नहीं, फिर इस कथा को इतने विस्तार से गोस्वामीजी ने क्यों लिखा ? रामचरित्र को लिखने से पहले कपटी मुनि की कथा कहने की क्या आवश्यकता थी ? जो सोचता है कि तुलसीदासजी ने ऐसा करके गलत किया, वह महामूर्ख है। गोस्वामीजी ने इस कथा का वर्णन इसलिए सर्वप्रथम किया क्योंकि वर्तमान समाज में हम जैसे कपटी मुनि ही घूम रहे हैं, ऐसे कपटियों से समाज को सावधान करने के लिए ही उन्होंने इस कथा के माध्यम से हम जैसे धूर्त, पाखण्डी मुनियों का पर्दाफाश किया है। एकतनु नामक कपटी मुनि इतना बड़ा ढोंगी था, उसने ऐसा स्वांग बना रखा था कि प्रतापभानु उसे देखते ही प्रभावित हो गया। कपटी मुनि ने राजा से कहा कि मेरा नाम एकतनु है क्योंकि जबसे सृष्टि की रचना हुई है, तब से मेरा एक ही शरीर है। सृष्टि के बाद भी कभी भी मेरा पुनः जन्म और मरण नहीं हुआ; यह कितना बड़ा झूठ है। इसी प्रकार आज समाज में शत-प्रतिशत मिथ्या भाषण करने वाला ही आधुनिक काल का साधु है। 'एकतनु' नामक कपट मुनि के भाषण में एक प्रतिशत भी सच्चाई नहीं थी, प्रतापभानु उसके प्रभाव में आ गया और अंत में उसे रावण बनना पड़ा। इस कथा के माध्यम से गोस्वामीजी ने समाज को शिक्षा दी है कि कपट मुनियों के प्रभाव में आने पर अच्छे से अच्छा व्यक्ति

.....

भी रावण बन जाएगा। इतने चरम सत्य का उद्घाटन किया है गोस्वामीजी ने इस कथा के द्वारा, जो वर्तमान समाज में पूर्ण रूपेण प्रतिलक्षित होता है, चारों ओर दम्भ और पाखण्ड ही आज समाज में दिखाई पड़ता है। भागवत-माहात्म्य में भी इसी विकृति को दर्शाया गया है कि कलियुग में प्रायः सभी अच्छाइयाँ नष्ट हो गयीं हैं।

सत्यं नास्ति तपः शौचं दया दानं न विद्यते।
उदरम्भरिणो जीवा वराकाः कूटभाषिणः॥

(पद्मपुराणोक्त श्रीभागवत-माहात्म्य १/३१)

कलियुग में कहीं भी सत्य नहीं है, कहीं तप नहीं है, शौच (पवित्रता) कहीं नहीं है, दान कहीं नहीं है। फिर है क्या? केवल पेट भरो, कपट-भाषण करने वाले हैं। बाह्य-वेष से विरक्त हैं लेकिन परिग्रही (संग्रही) हैं अर्थात् स्वार्थवश शिष्य-शिष्याओं को रखते हैं; ये स्थिति है कलियुग की, जिसका भागवत-माहात्म्य में नारदजी ने वर्णन किया है। कलिकाल की इसी दुर्दशा को देखते हुए कपट मुनि की कथा के माध्यम से गोस्वामी तुलसीदासजी ने कूटभाषियों की पोल खोली है। समाज की इस दयनीय अवस्था को संत नहीं लिखेंगे तो कौन लिखेगा? किसमें हिम्मत है जो लिखे और किसमें साहस है जो इसे कहे; वही कह सकता है जिसमें भगवान् की कृपा से दम (आध्यात्मिक-शक्ति) है।

'रसिकता' का सच्चा स्वरूप

एक बहुत आवश्यक व कीमती बात है – अनन्यता का वास्तविक स्वरूप समझना, जिसके बिना संसार में किसी सम्प्रदाय में जाओ, किसी मार्ग में जाओ, कहीं भी जाओ, कुछ भी सफलता नहीं मिलेगी। आज हमारा सारा समाज 'सच्ची अनन्यता' के बिना भटक रहा है। 'साम्प्रदायिक संकीर्णता' की बीमारी सारे वृन्दावन में भटकाव पैदा कर रही है, संकीर्ण बुद्धि वाले अपने ही सम्प्रदाय (धर्म) को श्रेष्ठ बतलाते हैं। जैसे कोई आदमी बाजार में जाता है तो वहाँ हर दुकानदार यही कहता है कि हमारी दुकान में जो माल है, वह किसी दुकान में नहीं है। ग्राहक के अन्दर दुकानदार ऐसा विश्वास पैदा कर देता है कि वह उसी दुकान में सामान खरीदेगा और दूसरी दुकान में नहीं जाएगा। इसको दुकानदारी (marketing) कहते हैं या बिजनेस का स्टंट कहते हैं। दुकानदार ग्राहक के आने पर कहता है - आइये, कहिए, आप गरम पियेंगे कि ठण्डा। दुकानदार देखता है कि गरम पियेंगे तो कॉफी मँगा देता है, ठण्डा पियेंगे तो लस्सी आदि मँगा देता है, किसी भी तरह से वह उस ग्राहक को फँसा लेता है; यही बात आज वृन्दावन में हो रही है। वृन्दावन में बड़े-बड़े महात्मा लोग इसी धंधे को कर रहे हैं; वे कहते हैं कि हम बड़े रसिक हैं, हमारे यहाँ जो रस है, वह कहीं नहीं है; आजकल अधिकतर यही बातें सम्प्रदायों में पढ़ायी जाती हैं।

कृष्ण-उपासना की शाखायें –

श्रीगौड़ीय-सम्प्रदाय – गौड़ीय सम्प्रदाय में राधाकृष्ण की 'अनर्पित चरी माधुरी' ये वहाँ का प्रसिद्ध शब्द है। यह नाम श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी द्वारा दिया हुआ है। 'अनर्पित चरी' अर्थात् ऐसी माधुरी जो अब तक अनर्पित थी, लोग उसको नहीं पा सके थे, उसको श्रीमहाप्रभुजी ने कृपा करके दिया। अब स्वाभाविक है कि जो जिज्ञासु वहाँ जायेगा और सुनेगा कि 'अनर्पित चरी माधुरी' जो आज तक किसी को नहीं मिली और वह महाप्रभुजी ने ही केवल जीवों को प्रदान की तो नया साधक उसी सम्प्रदाय का अनन्य बन जायेगा।

श्रीवल्लभकुलीय – वल्लभकुल में सबसे पहले यही सिखाया जाता है –

"नाश्रितो वल्लभाधीशो न च दृष्टा सुबोधिनी
नाराधिराधिकानाथो वृथा तज्जन्म भूतले"॥

जिसने श्रीमद्वल्लभाचार्यजी का आश्रय नहीं लिया और जिसने 'सुबोधिनी' नहीं देखा ('सुबोधिनी' जो वल्लभसम्प्रदाय की श्रीमद्भागवत् की प्रसिद्ध टीका है।)

जिसने राधिकानाथ की आराधना नहीं की, उसका पृथ्वी पर जन्म लेना व्यर्थ हो गया है; ऐसा सुनकर 'साधक' उसी सम्प्रदाय का अनन्य हो जाता है।

श्रीराधावल्लभ सम्प्रदाय – वहाँ भी सेवक-वाणी में यही लिखा है –"वंश बिना हरिनाम न लइहौं" उनके आचार्य का नाम 'हरिवंश' है; इसलिए सेवकजी ने कहा कि वंश (हरिवंश) के बिना तो हम 'हरिनाम' भी नहीं लेंगे; इस प्रकार की 'आचार्य-निष्ठा' वहाँ है और जब आपस में वहाँ के भक्तजन मिलते हैं तो अभिवादन करते समय एक-दूसरे से 'हरिवंश-हरिवंश' ऐसा कहते हैं, वे लोग 'हरिवंश' के बिना 'हरिनाम' भी नहीं लेंगे।

श्रीहरिदासी – स्वामी हरिदासजी के अनुयायियों के पास पहुँचो तो वहाँ भी यही कहा जाता है कि "हरिदास बिना हरिनाम न लइहौं" वे कहते हैं कि 'हरिदास-हरिदास' रटो, 'हरिनाम' भी नहीं; ऐसा सुनकर नया साधक वहाँ का अनन्य बन जाता है।

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय – निम्बार्क सम्प्रदाय में वहाँ का पूज्य ग्रन्थ है 'महावाणी'। वहाँ साधकों को 'महावाणी' का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया जाता है।

'नये साधक' जो कुछ नहीं जानते, कभी-कभी इन सब बातों को सुनकर वे लोग बहक जाते हैं।

'मानमन्दिर' पर एक संतजी रहते थे, जो बड़े सदाचारी थे, मधुकरी पर जीवन-निर्वाह करते, धन का स्पर्श नहीं करते थे; उनको लोगों ने 'महावाणी' का रस लेने के लिए इस प्रकार बहका दिया कि वह मानगढ़ छोड़कर अन्यत्र चले गये। फिर ब्रजवासी बड़ी मुश्किल से उनको वापस लाये और इसी कारण उनकी असमय में मृत्यु हुई। जब वह रसिक बनने के लिए अन्यत्र चले गये थे, तभी हम (बाबाश्री) समझ गये थे कि उनका भविष्य अंधकार में है, रसिक बनना कोई खेल नहीं है, वह पढ़े-लिखे नहीं थे, लोगों ने उन्हें बहका दिया था तो चिल्लाते थे 'महावाणी-महावाणी'; वास्तव में तो वह 'महावाणी' के बारे में लेशमात्र भी नहीं जानते थे। इसी तरह से मानगढ़ से पाँच-दस सन्त चले गये रसिक बनने के लोभ से, चले गये तो चले जाओ, यहाँ तो कोई क्षति नहीं है, यहाँ तो मानबिहारीलाल की कृपा से जो 'सत्संग' चल रहा है, वह बढ़ रहा है और बढ़ता रहेगा क्योंकि राधारानी की कृपा से हम लोग किसी वासना से सत्संग नहीं करते। वासना से युक्त जो बातें होती हैं, वहाँ न रस है, न प्रेम है, कुछ भी नहीं है। कोई भी वासना है, वह पिशाचिनी है। वासना क्या है ? हमारा लोगों में प्रभाव बढ़े, हमारा यश-ऐश्वर्य बढ़े, ये सब वासनायें हैं; जहाँ वासनाएँ हैं, वहाँ प्रेम नहीं है, रस नहीं है; ऐसे वासना युक्त लोगों के पास पहुँचकर 'साधक' जीवन भर भटकता रहता है। जिसके अन्दर वासना है, वहाँ प्रेम या रस तो लेशमात्र भी नहीं है।

वास्तव में जीव का विनाश 'कुसंग' से होता है। 'कुसंग' आकाश से नहीं आता, हम जैसे साधु लोग ही 'कुसंग' देते हैं, इसके कारण अच्छे साधक भी बहक जाते हैं। ये जो बीमारी है 'रसिक' बनने की, 'रस' कोई ऐसी वस्तु लड्डू-पूड़ी नहीं है कि जल्दी से दुकान पर जाकर तुम उसको खरीद लोगे। आज से कुछ साल पहले यहाँ पर एक 'साधक' रहते थे, वह रसिक बने और उनको 'दूसरे लोगों को भी रसिक बनाने की' धुन लगी। आखिर में उस साधक (साधु) ने विशेष निन्दा आदि करना प्रारम्भ कर दिया तो उसके कर्म अंत में उसे स्वयं ही ले गये; उस निन्दक साधु ने यहाँ से बहुत साधुओं को रसिक बनाने की कोशिश की, उन्हें यहाँ से हटाया। हम देखते रहे, हमने हस्तक्षेप नहीं किया। कोई जाता है तो चला जाये। यह तो राधारानी का दरबार है। यहाँ राधारानी की कृपा प्रत्यक्ष कार्य कर रही है। कोई हजार प्रयत्न करके भी मानमंदिर को गिरा नहीं सकता। 'मानमंदिर' तो बढ़ रहा है और बढ़ता रहेगा, गिरेगा तब जब हमारे अन्दर वासना आ जायेगी। सभी लोग रसिक बनना चाहते हैं लेकिन रसिक बनना खेल नहीं है। 'सत्संग' को छोड़कर जो-जो रसिक बनने गये, उनका समय व्यर्थ नष्ट हुआ, वे लोग इधर-उधर व्यर्थ में घूमते हुए दिखाई पड़ते हैं।

प्रायः आजकल के तथाकथित महावाणी के रसिक बनने वाले स्वयं 'महावाणी के सिद्धान्तों' से विपरीत मार्ग पर

चल रहे हैं। आज सारे समाज में देख आओगे कि लोग केवल ऊपरी तौर पर 'महावाणी' का पाठ करते हैं और जीवन में, क्रिया में नहीं है। महावाणी का एक अंश हम बताते हैं –

रसिक बनने के लिए महावाणी में 'सिद्धांत सुख' में पद-संख्या -३१ में १२ लक्षण बताये गये हैं और १० प्रकार की भक्ति बतायी गयी है, तब तुमको रस मिलेगा...।

रस-प्राप्ति के लिए अति आवश्यक लक्षण –

जो कोउ प्रभु कें आश्रय आवैं। सो अन्याश्रय सब छिटकावैं॥
बिधि-निषेध कें जे जे धर्म। तिनकों त्यागि रहें निष्कर्म॥
झूठ क्रोध निन्दा तजिदेंहीं। बिन प्रसाद मुख कौर न लेंहीं॥
सब जीवनि पर करुना राखें। कबहुँ कठोर बचन नहिं भाखें॥
मन माधुर्य-रस माहि समोवें। घरी पहर पल वृथा न खोवें॥
सतगुरु के मारग पगु-धारें। हरि सतगुरु विधि भेद न पावै॥
ए द्वादस-लच्छिन अवगाहें। जे जन परा परम-पद चाहें॥

पहला लक्षण है - भगवान् का आश्रय, दूसरा लक्षण है - अन्याश्रय सब छोड़ दो, अब यहाँ पर लोग फेल हो जाते हैं। यदि तुम पैसे का आश्रय करते हो, चेला-चेलियों का आश्रय करते हो तो यह अन्याश्रय है। 'गुरु' के बारे में महापुरुषों ने कहा –

जो गुरु करै शिष्य की आस।
श्याम भजन ते भया उदास॥

शिष्य का आश्रय लेने वाले 'गुरु' का भगवदाश्रय नष्ट हो जाता है। जीवाश्रय लिया और भगवदाश्रय नष्ट हुआ। शरीर, इन्द्रियों आदि में आसक्ति होना, ये सभी अन्याश्रय में आता है। अधिकतर देखा जाता है कि लोग अन्याश्रय ही कर रहे हैं। यहाँ तक कि पचास-साठ वर्ष पहले हमने और गुरुदेव (बाबा श्रीप्रियाशरणजी महाराज) ने वृंदावन में देखा – उस समय महावाणी की समाज होती थी, तो उसमें एक मुखिया व झेला (सहायक) होता है लेकिन वहाँ दिखाई पड़ा कि समाज-गायन के बाद मुखिया और झेला की आपस में दूध के कुल्हड़ तथा दक्षिणा पर लड़ाई हो रही थी, मुखिया को अधिक दक्षिणा मिली तो झेला कहता है कि हमको कम दक्षिणा क्यों मिली; ये सब लीलायें हमारी समझ में नहीं आती थीं कि ये कैसे रसिक हैं ? जो दूध के कुल्हड़ के लिए लड़ते हैं। 'अन्याश्रय न होना दूसरा लक्षण है'। तीसरा लक्षण है – **'बिधि-निषेध कें जे जे धर्म। तिनकों त्यागि रहें निष्कर्म'॥** अधिकतर आधुनिक रसिक 'निष्कर्म' ही नहीं जानते हैं, बस पाठ करते रहते हैं। केवल इतना समझते हैं कि हमने विधि-निषेध छोड़ दिया, विधि-निषेध को छोड़ने से कोई निष्कर्म नहीं होता, इससे मनुष्य का पतन हो जाता है। 'निषेध' क्या है ? गलत काम करना - चोरी, छिनारी आदि जिसको वेदों में वर्जित किया, वह निषिद्ध है। 'विधि' क्या है ? शास्त्र में जो विधियाँ बतायी गई हैं। आजकल प्रायः लोग 'विधि-निषेध' छोड़कर मनमाना आचरण करने लगे और अपने को 'निष्कर्म' समझते हैं। 'निष्कर्म' की परिभाषा श्रीभगवान् ने गीताजी में बताई है –

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्न्यासेनाधिगच्छति॥

(श्रीगीताजी १८/४९)

'सर्वत्र असक्तबुद्धि' अर्थात् देह, गेहादि सम्बन्धों में कहीं भी आसक्ति न रहे, 'जितात्मा' – मन को जीत लिया है, 'विगतस्पृहः' – मन में इच्छा नहीं रही; उसको 'निष्कर्म' कहते हैं। 'निष्कर्म' बनने के बाद ही तुम आगे बढ़ोगे, रसिक बनोगे, इसके पहले रस की गंध भी नहीं मिलेगी। पाँचवाँ लक्षण है – झूठ को छोड़ो, क्रोध को छोड़ो, निन्दा छोड़ो; रसिक बनना है तो ये दुर्गुण छोड़ने पड़ेंगे लेकिन आजकल के ये तथाकथित (दाम्भिक) रसिक एक नम्बर के झूठे होते हैं, एक नम्बर के क्रोधी होते हैं, एक नम्बर के निंदक होते हैं जो आचार्यों, भक्तों, महापुरुषों, शास्त्रों व सभी सम्प्रदायों की निंदा करते हैं और जन्म भर करते-रहते हैं; तब फिर ये रसिक कैसे बन जायेंगे ?

छठवाँ लक्षण है – बिना भगवान् को भोग लगाये, भोजन नहीं करना। क्रोध का मूल है वाद-विवाद और हम लोग बहस करते हैं और अपनी बात कटती है तो गुस्सा आता है। वाद-विवाद, बहस करने से 'श्रीभगवान् का रस' नहीं मिलेगा। गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है –

भगति पच्छ हठ नहिं सठताई।
दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई॥ (श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -४६)

'हठ' – ये सबसे बड़ी नीचता (शठता) है। हमारी बात सही होनी चाहिए, हमारी बात मानी जाए, हम जो कहें, वही हो; ये हठ है, यह हठ रूपी शठता (मूर्खता) जिसके अन्दर है, उसको भक्ति नहीं मिलेगी, क्योंकि वह जीवन भर लड़ेगा, अशान्त रहेगा। भक्ति उसी को मिलेगी, जो अपना दुराग्रह न रखे।

चाणक्य ने कहा है – बुद्धिमान का लक्षण है 'अनाग्रह'। सातवाँ लक्षण है – सभी जीवों के प्रति करुणा का भाव रखना।

आठवाँ लक्षण है – 'कबहुँ कठोर बचन नहिं भाखें' कठोर वाणी कभी नहीं बोलनी चाहिए।

नवाँ लक्षण है – हमेशा लाल-ललना के मीठे रस में मन डूबा रहे, इससे अपने आप क्रोध हट जाएगा।

दशवाँ लक्षण है – 'घरी पहर पल वृथा न खोवें' एक क्षण भी व्यर्थ नष्ट न करे।

ग्यारहवाँ लक्षण है –'सतगुरु के मारग पगु-धारें' सद्गुरु ने जो बताया, उसी रास्ते पर चलो।

बारहवाँ लक्षण है – 'हरि सतगुरु विधि भेद न पावै' सद्गुरु और श्रीहरि के बीच में भेद न करो, श्रीगुरुदेव में ईश्वर-बुद्धि करो।

ये बारह लक्षण अगर तुम्हारे अन्दर हैं तो 'रस-सम्प्रदाय' में तुम्हारा प्रवेश हो गया। खाली दस-बीस पद पाठ कर लिये, उससे रसिक नहीं बनोगे।

रस-प्राप्ति की सीढ़ियाँ –

जाकें दस पैड़ी अति दृढ़ि हैं। बिन अधिकार कौन तहाँ चढ़िहैं।
पहले रसिक जनन कों सेवें। दूजी दया हिये धरि लेवें।
तीजी धर्म सुनिष्ठागुनि हैं। चौथी कथा अतृप्त ह्वै सुनि हैं।
पंचमि पद पंकज अनुरागें। षष्टी रूप अधिकता पागें।
सप्तमि प्रेम हिये विरधावें। अष्टमि रूप ध्यान गुण गावें।
नवमी दृढ़ता निश्चैं गहिबें, दसमी रसकी सरिता बहिबें॥

सबसे पहले रसिक संतों की सेवा करो। अब आजकल के रसिक कहते हैं कि हमारा संग करो; उनके कहने का सैकड़ों इसके प्रमाण हैं लेकिन जो साधक रसिक बनने चले, उन्होंने अखण्ड कीर्तन में बैठना छोड़ दिया, दैनिक भाव यह रहता है कि दूसरी जगह मत जाना, दूसरा संग नहीं करना क्योंकि दूसरा रसिक नहीं है, तुम्हारा रस नष्ट हो जायेगा, इस तरह से उसको बाँध देते हैं। 'चौबेजी चले थे छब्बे होने को, दुबे रह गये'। चतुर्वेदी कहते हैं चार वेदों के ज्ञानी को, तो चौबे (चतुर्वेदी) छठवाँ वेद पढ़ने गये, लेकिन उनके गाँठ के दो और चले गये; इसलिए वैसे ही चले थे रसिक बनने, गाँठ का समय नष्ट हुआ, जो बेचारे पहले अखण्ड संकीर्तन में कीर्तन किया करते थे, वह सब छूट गया क्योंकि रसिक बन गये हैं।

यहाँ भी (मानमंदिर में) बहुत अच्छे साधक थे लेकिन वे रसिक बनने चले तो उनका सब समय नष्ट हो गया, 'जीवन' भजन-शून्य हो गया; दो-चार रस के पदों का पाठ कर लेते हैं और बन गये रसिक, यही उनका जीवन है। नहीं तो साधन के बारे में 'महावाणी' में लिखा है कि एक घड़ी, एक पल भी नष्ट नहीं होना चाहिए। श्रीभगवान् ने गीताजी में स्वयं कहा है –

"सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढ़व्रताः"।
"युञ्जन्नैवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः"।

दैवी प्रकृति तुम्हारी तभी बनेगी, जब साधन लगातार (निरन्तर) चलेगा। अखण्ड कीर्तन करो, अखण्ड स्मरण करो तब तुम्हारी प्रकृति दैवी बनेगी, नहीं तो राक्षसी, आसुरी और मोहिनी प्रकृति बनी रहेगी। इसी तरह भगवान् ने कई जगह कहा है कि साधन वही है, जिसमें मन कभी उकतावे नहीं। तुम्हारे पाप तभी नष्ट होंगे, जब सदा साधन में लगे रहोगे, तब तुम 'विगत कल्मष' बनोगे। 'सतत' माने चौबीस घण्टे लगे रहो साधन में। श्रीभगवान् ने स्वयं कहा है –

तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा॥

(श्रीगीताजी ६/२३)

मन साधन से कभी थके नहीं, लगे रहो चौबीस घंटे, तब तुम्हारा पाप नष्ट होगा और अन्तःकरण स्वच्छ होगा।

कथा (नित्य सत्संग) सुनना बन्द कर दिया और कहा कि हम तो केवल महावाणी आदि रसिक ग्रन्थ सुनेंगे और कुछ

नहीं, इससे उनको अत्यधिक नुकसान हुआ। विवेकहीन साधक बड़ी जल्दी बहक जाता है। इसीलिए भगवान् ने गीता में कहा कि भक्त को दक्ष (चतुर) होना चाहिए –

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥

(श्रीगीताजी १२/१६)

गीताजी में भक्त के लक्षणों में श्रीभगवान् ने बताया कि भक्त का मतलब यह नहीं कि बुद्धिहीन हो, जो चाहे सो बहका ले, उल्टी पट्टी पढ़ा दे; इस तरह से भक्ति नहीं कर पायेगा। भगवान् ने कहा – भक्त को बड़ा चतुर होना चाहिए, चतुर नहीं होगा तो दम्भी के चक्कर में फँस जाएगा। अगर भक्त 'दक्ष' नहीं है तो कैसे समझ पायेगा कि हमारा समय नष्ट हो गया, हम वाद-विवाद में क्यों फँस गये; ये सब चतुरता भक्त में चाहिए, नहीं तो आज नहीं कल वह नष्ट हो जायेगा, रसिक तो क्या रस की बूँद भी नहीं मिलेगी। अभी पहले बताया जा चुका है कि रसिक बनने के लिए महावाणी के अनुसार १२ लक्षण और १० सीढ़ियाँ चाहिए लेकिन सही ढंग से न चलने पर एक भी नहीं मिलेगी, केवल बातें ही बातें मिलती हैं रसिकता की और जो साधक पहले अखण्ड कीर्तन भी करते थे उनका वह भी छूट जाता है क्योंकि एक ही सनक उसको रहती है रसिक बनने की। 'रस' राग-द्वेष से रहित है। जो रागी है, अहंता का इच्छुक है तो 'रस' कहाँ है वहाँ। किसी भी आचार्य में श्रद्धा रखो लेकिन अन्तःकरण तो 'भगवन्नाम' से ही शुद्ध होगा।

'चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्नि निर्वापणम्'

चित्त रूपी शीशे को साफ करने के लिए 'नाम-कीर्तन' जरूरी है। अब ये कौन-सा रस है कि तुमको 'नाम-कीर्तन' में ही रस नहीं आ रहा है और 'भगवन्नाम' से तुमको विरति है, तब तुमको 'रस' कैसे मिलेगा? रसिक बनने के लिए तो **'घड़ी प्रहर पल वृथा न खोवै'** एक पल भी व्यर्थ नष्ट नहीं होना चाहिए, अगर समय नष्ट हुआ तो हम 'रसिक' नहीं बन सकते। 'रसिक' बनने के चक्कर में अच्छे विरक्त लोग नष्ट हो गये, कीर्तन करना भी छोड़ दिया, साधनहीन हो गये, इधर से उधर घूमते रहते हैं, ऐसा उनका जीवन बन गया। इसलिए सबको ऐसा जीवन बनाना चाहिए कि एक पल का समय भी बर्बाद न हो या तो कीर्तन-भजन में समय जाए या सेवा में जाए। बहुत से लोग जानते नहीं कि 'महावाणी' क्या है? 'महावाणी' में क्या लक्षण बताये गये हैं? 'रसिक' बनने की क्या सीढ़ियाँ हैं? किसी को भी ज्ञान नहीं है। इसलिए 'सच्चा रसिक' कौन है? उसके क्या लक्षण हैं? पहले इसको समझना चाहिए और व्यर्थ ही समय नष्ट नहीं करना चाहिए।

ब्रजवासियों व साधु-संतों की मुख्यमंत्री महोदय से अपील

आदरणीय श्री अशोक गहलोत जी,
माननीय मुख्यमंत्री,
राजस्थान सरकार |

विषय: **भरतपुर के पहाड़ी व नगर तहसील में स्थानीय प्रशासन के सहयोग से ब्रज के धार्मिक पर्वत कनकांचल व आदिबद्री पर हो रहे खनन पर तुरंत रोक लगाने हेतु |**

महोदय,

उपरोक्त विषय के सन्दर्भ में निवेदन है कि जिला प्रशासन व राज्य सरकार को कई बार प्रार्थना करने पर भी ब्रज के परम धार्मिक पर्वत आदिबद्री व कनकांचल पर हो रहे खनन को अभी तक नहीं रोका गया है, अपितु जन-भावनाओं की अनदेखी कर खननकर्ताओं को सहयोग करते हुए वृहद् स्तर पर अवैध खनन-कार्य व वनभूमि पर

असंवैधानिक अतिक्रमण को अंजाम दिया जा रहा है | कृपया इस सन्दर्भ में निम्न तथ्यात्मक बिन्दुओं की गंभीर विवेचना कर अविलम्ब उपरोक्त खनन-कार्य को बंद करवाएँ :

1. उल्लेखनीय है कि नवम्बर 2009 में साधु-संतों व विश्वभर के कृष्णभक्तों की भावनाओं को गंभीरता से लेते हुए तत्कालीन सरकार ने डीग व कामा तहसील में पड़ रहे ब्रज के पर्वतों को संरक्षित वन-क्षेत्र घोषित कर एक अत्यंत सराहनीय कार्य किया था | तब स्थानीय प्रशासन की जानकारी के अभाव के कारण उक्त में से अत्यंत महत्वपूर्ण पर्वत कनकांचल व आदिबद्री का कुछ हिस्सा जो कि तहसील नगर व पहाड़ी में पड़ता है एवं ब्रज का अभिन्न अंग है व जिसके रक्षण के लिय विगत 15 वर्षों से साधु-संतजन, ब्रजवासीजन, कृष्णभक्तजन आदि संघर्षरत हैं, तहसील में अंतर होने के कारण वन-क्षेत्र घोषित होने से छूट गया था | वर्ष 2009 में डीग व कामां स्थित ब्रज के पर्वतों को संरक्षित वनक्षेत्र घोषित किए जाने बाद से ही नगर तहसील के ग्राम नांगल, बुआपुरगडी, कोरली, बेगपहाड़ी, रसूलपुर, ककराला आदि में पड़ रहे आदिबद्री पर्वत के छूटे हुए हिस्से को व तहसील पहाड़ी में पड़ रहे कनकांचल पर्वत के छूटे हुए टुकड़े पर, जो कि ब्रजक्षेत्र का अभिन्न हिस्सा है, भारी मात्रा में खनन-कार्य चल रहा है व इसकी आड़ में प्रशासन व उच्च पद पर बैठे अधिकारियों के प्रभाव के चलते बड़े स्तर पर सटे हुए संरक्षित वनक्षेत्र में अवैध खनन को अंजाम दिया जा रहा है |

2. खनन-कर्ताओं द्वारा उक्त क्षेत्र में खनन की आड़ में करोड़ों रुपयों की धाँधली के साथ-साथ माननीय उच्चतम न्यायालय के विभन्न आदेशों व वन-सम्बंधी कानूनों की खुलेआम अवहेलना कर ब्रज में स्थित धार्मिक पर्वत व वनक्षेत्र का न्योजित तरीके से नाश किया जा रहा है |

3. उल्लेखनीय है कि स्थानीय जनमानस के जीवन की रक्षा के लिए जून 2012 में भरतपुर के तत्कालीन जिलाधीश श्री गौरव गोयल जी द्वारा कनकांचल पर्वत पर अवैध खनन-कार्य बंद करने हेतु पर्वत से लगे 14 ग्रामों जोधपुर, मुन्गसका, समसलका,उभाका, अमरुका, सतवाडी, तिलकपुरी, मल्लाका, भैन्सेडा, बुराना, कैथवाडा, करुआ, दादंडी एवं मान्दौर को खनन-गतिविधियों यथा खनन, क्रेशर, चक्की आदि हेतु प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित करने व उपरोक्त में से 5 ग्राम मून्गसका समसलका, मल्लाहाका, करुआ व भैन्सेडा को सघन वृक्षारोपण हेतु वन-विभाग में स्थान्तरित करने हेतु अनुशंसा की गयी थी, उस पर भी राज्य- सरकार द्वारा कोई कार्यवाही नहीं हुई |

4. यहाँ तक कि दिनांक 10 मार्च 2014 को नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (NGT) में तत्कालीन जिलाधिकारी, भरतपुर द्वारा राज्य सरकार की ओर से दिए गए अपने शपथ पत्र में स्वयं राज्य सरकार ने पहाड़ी तहसील के उपरोक्त गाँवों को ब्रजक्षेत्र, जिसका अत्यधिक धार्मिक महत्व है, का अभिन्न हिस्सा माना है व यहाँ के पर्यावरण व भौगोलिकता की सुरक्षा के लिए खनन-गतिविधियों पर प्रतिबन्ध की बात प्रस्तुत की है |

5. यह भी उल्लेखनीय है कि स्थानीय जनमानस के जीवन की रक्षा के लिए मार्च 2014 में तत्कालीन संभागीय आयुक्त श्री ओ.पी. सैनी जी की अनुशंसा पर नगर तहसील के ग्राम नांगल, बुआपुरगडी, कोरली, बेगपहाड़ी, रसूलपुर, ककराला आदि में पड़ रहे आदिबद्री पर्वत के हिस्से को वनविभाग को स्थान्तरित करने का प्रस्ताव तैयार किया गया था जिसमें स्थानीय अधिकारियों ने लोभवश, तथ्यों से परे, झूठी रिपोर्ट देते हुए कि स्थानीय ग्रामीणों के लिए उक्त प्रस्ताव हितकर नहीं है, यह बता कर अग्रिम कार्यवाही नहीं होने दी | जबकि आदिबद्री से जुड़े 40 से अधिक गाँवों के सरपंचों ने आदिबद्री को तत्काल खनन-मुक्त कर वन- विभाग को देने के लिए मुख्यमंत्री को पत्र लिखा है व उन्हीं गाँवों के ग्रामीण 16 जनवरी 2021 से उक्त क्षेत्र को वनभूमि में हस्तांतरित करने के लिए आन्दोलन कर रहे हैं |

6. नगर तहसील के ग्राम ककराला, रसूलपुर, बुआपुरगडी, कोरली, नांगल, रूपवास व बेगपहाड़ी के स्थानीय निवासियों व सरपंचों द्वारा भी प्रशासन को कई बार खनन के कारण हो रहे दुष्प्रभावों जैसे मवेशियों का मरना, जीवन को ख़तरा आदि से अवगत कराया जा चुका है |

7. अत्यंत महत्वपूर्ण यह भी है कि ग्राम डाबक व ककराला पंचायत द्वारा उक्त खनन को अविलम्ब बंद करने के लिए वर्ष 2017 में सर्वसम्मति से प्रस्ताव भी पारित कर राज्य-सरकार को भेजा जा चुका है |

8. उल्लेखनीय है कि नगर तहसील में प्रमुख खननकर्ता प्रभुदयाल सोनी द्वारा कामां तहसील के अंतर्गत आने वाली वनविभाग की भूमि को विगत 4 वर्षों से असंवैधानिक रूप से गैर-वानिकी प्रयोग में लेकर उच्चतम न्यायलय व कानून का खुलेआम उल्लंघन किया जा रहा है | पूर्व में भी वनविभाग द्वारा कार्यवाही कर उक्त अवैध मार्ग को काट दिया गया था लेकिन स्थानीय अधिकारियों की मिलीभगत से प्रभुदयाल सोनी ने बलपूर्वक उस अवैध रास्ते को पुनः चालू कर अपने सैकड़ों भारी ट्रकों व बोल्डर का आवागमन बदस्तूर जारी रखा हुआ है व ब्रज के परम पवित्र धार्मिक पर्वत आदिबद्री व संरक्षित वनक्षेत्र को नष्ट करने में लगे हुए हैं | महत्वपूर्ण यह भी है कि जो रास्ता वर्ष 2016 में स्थानीय ग्रामवासियों की सुविधा के लिए 'पंचायत समिति कामां' द्वारा ग्राम औलन्दा से बांसोली के मध्य ग्रेवल रोड हेतु प्रस्ताव पारित कर वन-विभाग की भूमि को राज्य-सरकार से प्रत्यावर्तित कराया गया वह 'रोड' बड़े पदों पर बैठे रसूकदारों के चलते तत्कालीन विकास अधिकारी व प्रभुदयाल सोनी की मिलीभगत के कारण आज तक न तो बांसोली तक बन पाई व न ही ग्रामवासियों के उपयोग में आ रही है, अपितु गैरकानूनी तरीके से उस रोड की चौड़ाई को बढ़ाया गया एवं सरकारी रुपयों का दुरुपयोग कर एन्कांशा माइंस की खान तक असंवैधानिक रूप से बनाया गया; यह पूरा कृत्य सर्वथा गैरकानूनी है व माननीय उच्चतम न्यायालयों के निर्देशों की खुली अवहेलना है एवं जिसके कारण स्थानीय ग्रामवासियों

में भारी आक्रोश है | यह भी सर्वविदित है कि स्थानीय प्रशासन का खुला सहयोग होने के कारण खनन करने वाले निर्भीक होकर खुलेआम कानून को अपने हाथ में लेकर वन भूमि में कब्जा कर बड़े स्तर पर गैर-वानिकी कार्य कर रहे हैं एवं बार-बार अवगत कराने पर भी जिला प्रशासन मूक दर्शक बना हुआ है | वन विभाग द्वारा उपरोक्त खनन कर्ता के विरुद्ध कई पत्र व यहाँ तक कि एफ.आई.आर भी दर्ज करा कर सभी वरिष्ठ अधिकारियों को अवगत कराया जा चूका है फिर भी जिला प्रशासन उक्त खनन माफिया के आगे लाचार खड़ा हो वनभूमि एवं ब्रज के धार्मिक पर्वत को नष्ट करने के जघन्य अपराध में पूर्णत सहभागी बना हुआ है | यह भी यहाँ उल्लेखित करना महत्वपूर्ण होगा कि प्रभुदयाल सोनी द्वारा जिस खान में खनन किया जा रहा है, वह भी गैर कानूनी तरीके से हथयाई गयी है व इसी प्रकरण में उनके खिलाफ गिरफ्तारी के आदेश भी हुए है परन्तु इस विषय में भी खननकर्ता के प्रशासन पर प्रभाव के चलते कोई कार्यवाही नहीं हुई है | इसी सन्दर्भ में अनेको बार कई हज़ारों की संख्यां में स्थानीय ग्रामवासी व भक्तगण प्रशासन द्वारा एक अपराधी को खुला संरक्षण देने के विरोध में पूर्वसरकार, जिलाप्रशासन व पुलिस अधिकारीयों के खिलाफ प्रदर्शन किया गया व राज्य सरकार द्वारा इस मामले में तुरंत हतक्षेप कर दोषी अधिकारियों पर सख्त दंडनात्मक कार्यवाही करने की माँग की गई ताकि प्रशासन की मिलीभगत से चल रहे इस तरह के अपराध पर पूर्णत रोक लगाई जा सके | हाल ही में माननीय उच्चतम न्यायलय ने उपरोक्त प्रकरण के सन्दर्भ में मानमंदिर के सचिव द्वारा की गयी याचिका पर केंद्र व राज्य सरकार को नोटिस जारी किये हैं | इतना सब होने पर पर भी बड़ा खेद का विषय है कि विगत 6 वर्षों में आज तक कोई कार्यवाही नहीं हुई है |

9. उपरोक्त ब्रज के आराध्य पर्वतों से जुड़े सभी गांवों के सरपंचों ने ब्रज की जनता पर खनन के कारण हो रहे अन्याय के बारे में सरकार को अवगत कराते हुए अविलम्ब कनकांचल व आदिबद्री पर्वत को खनन-मुक्त करने की प्रार्थना आपको लिखे पत्र के माध्यम से व्यक्त करी है, जिसकी प्रतियां इस प्रतिवेदन के साथ सलंग्न की गई हैं | पत्र में उन्होंने यह भी लिखा है कि उक्त पर्वतों के आस-पास के गाँवों की समस्त पंचायतें इस खनन से त्रस्त व खिलाफ में हैं एवं प्रशासन की अनदेखी की कड़े शब्दों में भर्त्सना करती है | उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि इन गाँवों में से किसी को भी खनन-कार्य से कोई भी रोजगार प्राप्त नहीं हो रहा है |

10. गौरतलब है कि खनन-विभाग व जिला प्रशासन उपरोक्त पर्वतों पर खनन बंद होने पर जिस राजस्व की हानि के बारे में सरकार को भ्रमित कर रहा है उस परिप्रेक्ष्य में अगर ब्रज के पर्वतों पर वर्षों से हो रहे अवैध खनन की जाँच की जाए तो ज्ञात होगा कि विगत 10 वर्षों में इन पर्वतों पर वैध खनन की आड़ में राज्य सरकार को सैकड़ों करोड़ों रूपये के राजस्व का नुकसान पहुँचाया जा चुका है | उल्लेखनीय है कि पूर्व में भी राजस्व से अधिक जनमानस व स्थानीय लोगों की सुरक्षा एवं ब्रजक्षेत्र की महत्ता व पर्यावरण को महत्व देते हुए वर्ष 2009 में 270 से अधिक खानों को निरस्त किया गया था | जब हमारी आस्था के केंद्र इन पर्वतों का अस्तित्व

विनाशकारी खनन के चलते मिट जायेगा तब सरकारी राजस्व कहां से आएगा | अपनी संस्कृति को, अपने धर्म को, अपने गौरवपूर्ण इतिहास के प्रतीकों के संरक्षण के बजाय उनको को बेच कर व नष्ट कर झूठा राजस्व इक्कठा करना कहीं से भी तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता है बल्कि अंत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है व हमारी आने वाली पीढ़ियों के प्रति कुठाराघात है।

पुनः निवेदन है कि अनेकों बार प्रशासन को उक्त पर्वतों पर हो रहे खनन की असंवैधानिकता व पर्यावरण एवं ब्रज के भौगोलिक स्वरुप पर पड़ रहे अपरिवर्तनीय दुष्प्रभावों, एवं करोड़ों की संख्या में कृष्णभक्तों की भावना के साथ हो रहे खिलवाड़ के बारे में प्रार्थनापत्र, प्रदर्शन व जनान्दलनों द्वारा अवगत कराया जा चुका है लेकिन झूठे आश्वासन के अलावा अभीतक कोई भी कार्यवाही नहीं की गयी है | कुछ अधिकारी, नेता व खनन में व्यापारियों के अनैतिक समन्वय व स्वार्थ के चलते न केवल सरकार की छवि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा अपितु स्थानियों लोगों व साधु-संतों एवं विश्व के ब्रजप्रेमियों में प्रशासन के खिलाफ खासा असंतोष व्याप्त हो चुका है **जिसके चलते विगत 16 जनवरी 2021 से स्थानीय ग्रामवासी व साधु-संत हजारों की संख्या में नगर तहसील में निर्णायक अनिश्चितकालीन धरने पर बैठ गए हैं जो कि कभी भी उग्र आन्दोलन का रूप ले सकता है | इस क्रम में कई प्रदर्शन आदि किये जा चुके हैं व हाल ही में जयपुर में जनचेतना मार्च भी निकाला गया है | महोदय इस यह एकदम स्पष्ट है कि यह आन्दोलन निर्णायक है एवं तब तक बंद नहीं होगा जब तक समूचा आदिबद्री पर्वत व कनकांचल पर्वत खनन मुक्त हो वन-विभाग को हस्तांतरित नहीं हो जाता है | इस विषय में हमने सम्पूर्ण जानकारी कई माध्यमों से आप तक पहुँचा चुके हैं |**

इस ज्ञापन के माध्यम से हम प्रार्थना करते हैं कि नगर तहसील के ग्राम ककराला, रसूलपुर, बुआपुरगडी, कोरली, नांगल, रूपवास व बेगपहाड़ी व पहाड़ी तहसील के ग्राम समसलाका एवं मुन्गासका में हो रहे खनन कार्य को अविलम्ब बंद करा कर उक्त तहसीलों में पड़ रहे सम्पूर्ण आदिबद्री व कनकांचल पर्वतीय क्षेत्र को वन विभाग को स्थान्तरित करने की कार्यवाही कर विगत 20 वर्षों से चल रहे संघर्ष को विराम देने की कृपा करें | इस अति महत्वपूर्ण प्रकरण में आपके त्वरित निर्णय से स्थानीय जनमानस के जीवन, ब्रज की धार्मिक पहाड़ियों, पर्यावरण व जीव-जंतुओं एवं विश्वभर के कृष्णभक्तों की भावनाओं की रक्षा होगी |

आदर सहित,

समस्त ब्रजवासीजन, ब्रज के साधु-संत व कृष्णभक्त

संलग्न 1. समाचार पत्रों में 16 जनवरी 2021 से जारी धरने के समाचार की प्रतिलिपियाँ।

2.सम्बंधित दस्तावेज

भरतपुर

आदिबद्री में 66वें दिन भी जारी रहा धरना, ग्रामीणों ने नारेबाजी कर किया प्रदर्शन

खनन का विरोध... महिलाएं भी जुटी आंदोलन में, विधिवत पूजन कर गांव-गांव किया प्रचार

भास्कर संवाददाता | डीग

आदिबद्री सहित कंकाचल पर्वतीय क्षेत्र में हो रहे खनन के विरोध में पंसोपा में चल रहे साधु संतों के अनिश्चितकालीन धरने के सोमवार को 66वें दिन धरनास्थल पर पंसोपा, अलीपुर, ककराला, पालका गांव से आईं महिलाओं ने भी अब इस महापड़ाव में अपनी भूमिका निभाते हुए महापड़ाव के लिए प्रचार की शुरुआत की। महिलाओं ने धरना स्थल पर एकत्रित होकर विधिवत पूजन व संकल्प कर गांव अलीपुर, पंसोपा व कोडली में जाकर महिलाओं से संपर्क कर महापड़ाव में बड़ी भूमिका निभाने के लिए प्रदर्शन कर प्रचार किया। इधर बरसाना स्थित मान मंदिर पर रंगीली के अवसर पर एकत्रित हुए जन समुदाय को बरसाना के विरक्त संत रमेश बाबा की आज्ञा से मान मंदिर के अध्यक्ष राधाकांत शास्त्री ने आगामी महापड़ाव की जानकारी दी और 10 अप्रैल के बाद आयोजित होने वाले महापड़ाव में देश के कोने-कोने से बड़ी संख्या में महापड़ाव में आने का संकल्प दिलाया। राधाकांत शास्त्री ने कहा कि ब्रज की संस्कृति पूरे भारत की प्राचीनतम संस्कृति है और देश ही नहीं अपितु पूरे विश्व की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक धरोहर है जिसे निर्ममता के साथ खननकर्ताओं द्वारा नष्ट किया जा रहा है। उसको अभी नहीं रोका गया तो हमारी पौराणिक संपदा, प्राचीन परंपरा व पर्यावरण सब खंड-खंड हो जाएगा। मान मंदिर के संत नरसिंहदास महाराज ने कहा कि अभी नहीं जागे तो आदिबद्री और कंकाचल पर्वत का अस्तित्व ही नष्ट हो जाएगा। उन्होंने आह्वान किया अब करो या मरो की स्थिति है। उल्लेखनीय है कि 25 मार्च को जन चेतना मार्च का आयोजन किया जा रहा है। साधु संतों ने 10 अप्रैल तक सरकार के निर्णय की प्रतीक्षा करने की बात कही है। इसके बाद एक विशाल महापड़ाव भरतपुर में डाला जाएगा। 66 दिन से धरने पर बैठे लोगों की बात पर ध्यान नहीं देने पर साधु संतों ने रोष जाहिर कर आंदोलन को तेज करने की चेतावनी दी है।

डीग. खनन के विरोध में मान मंदिर पर जुटी महिला श्रद्धालु।

बयाना @ पत्रिका. पूर्व सैनिक संघ बयाना की ओर से शुक्रवार शाम4 बजे चंदन गार्डन मैरिज होम में होली मिलन एवं सम्मान समारोह कार्यक्रम होगा । यह जानकारी संघ अध्यक्ष बलराम कामर ने दी।

धरनार्थियों ने जयपुर में निकाला जनचेतना मार्च

डीग @ पत्रिका. ब्रज के पर्वत आदिबद्री व कनकाचल पर हो रहे विनाशकारी खनन के विरुद्ध चल रहे धरने के 69 वे दिन जयपुर में सैकड़ों ब्रजवासियों व जयपुर वासियों ने जन चेतना मार्च निकालकर आदिबद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे खनन को अविलंब बंद करने की मांग की। जन चेतना मार्च में ब्रज केसाधु संत ग्रामवासी, पर्यावरणविद व जयपुर के वैष्णव जन कृष्ण भक्त सम्मिलित हुए और सभी ने ब्रज के लोकगीतों व कीर्तन के माध्यम से शहीद स्मारक से चलकर सिविल लाइन फाटक तक लंबी कतार में सरकार को ब्रज की पौराणिक संपदा व पर्वतों के रक्षा का संदेश दिया। जनचेतना मार्च में सम्मिलित ब्रज की साध्वियों ने ब्रज के पारम्परिक गीतों व कीर्तन पर नृत्य आराधना करते हुए सरकार को ब्रज की संस्कृति की महत्ता एवं अनुपमता के बारे में अवगत कराने का प्रयास किया। संपूर्ण जन चेतना यात्रा में ब्रज की संस्कृति के विभिन्न रंग व ब्रज की परंपरा की अद्भुत छटा देखने को मिली। सभी धरनार्थी साधु-संत व जयपुरवासी ब्रज के लोक गीतों पर थिरकते हुए इस जनचेतना मार्च में चले और सरकार के साथ-साथ आम जनमानस को ब्रज में हो रहे विनाश के बारे में जागरूक किया। मानमंदिर के राधाकांत शास्त्री व समिति के राष्ट्रीय सलाहकार चन्द्रशेखर खूंटेटा ने कहा कि साधु-संतों ने इस जनचेतना मार्च के माध्यम से सरकार के नेतृत्व पर विश्वास रखते हुए कहा कि हम मुख्यमंत्री के पास उनके ब्रज की अस्मिता व ब्रज के अस्तित्व के मूलभूत आधार इन पर्वतों के रक्षण की प्रार्थना लेकर आए हैं। हमें विश्वास है कि मुख्यमंत्री इस पर त्वरित कार्रवाई करेंगे। अगर ऐसा नहीं होता है तो बड़ी संख्या में 10 अप्रैल के बाद साधु संत ब्रज के इन पर्वतों की रक्षा के लिए आमरण अनशन पर बैठ कर अपने प्राणों तक को न्योछावर करने से पीछे नहीं हटेंगे। संरक्षण समिति के संरक्षक व पूर्व विधायक गोपी गुर्जर ने सरकार को स्पष्ट संदेश दिया कि वह अंतिम बार बड़ी आशा से सरकार के समक्ष अपनी मांग रखने आए इसके बाद भी अगर ठोस कार्रवाई नहीं होती है तो 10 अप्रैल के बाद ब्रज का संपूर्ण साधु समाज व देशभर से ब्रज से जुड़े असंख्य लोग अनिश्चितकालीन महापड़ाव करने के लिए विवश होंगे।

डीग. जयपुर में जन चेतना मार्च निकालते हुए। पत्रिका

आदिबद्री पर्वत में खनन कार्य का मामला : प्रशासन ने समझाइश कर लौटाया, वापस खनन शुरू होने पर दोनों पक्ष हुए आमने-सामने

साधु-संत व ग्रामीणों ने लीज धारक के कार्यालय में की तोड़फ

पत्रिका काइन रिपोर्ट

पत्रिका न्यूज नेटवर्क

रवा/पीकोरी. उपखंड के गांव पंसोपा से लगे 5 गांव के लोग और साधु-संतों ने सोमवार को बड़ी संख्या में कोलगी व अलीपुर के बीच आदिबद्री पर्वत पर चल रही खनन पर पहुंचकर उग्र प्रदर्शन किया। यहां एक लीज धारक के कार्यालय में तोड़फोड़ करने का आरोप है। दोनों पक्ष एक खाणी आमने-सामने हो गए। जिस पर पुलिस व प्रशासन के अधिकारियों ने पहुंच कर समझाइश की। बाद में आदिबद्री पर्वत पर चल रहे खनन कार्य को बंद करा दिया। ग्रामीणों ने बताया कि सोमवार को 10 बजे से हजार लोग आदिबद्री पर्वत पर खनन कार्य को बंद कराने के लिए एकत्रित हुए। इसमें महिलाएं भी बड़ी संख्या में शामिल थीं। इसके बाद ग्रामीण व साधु-संत लीज धारक के कार्यालय में पहुंचे। यहां खनन कार्य शुरू होने पर नाराजगी जताई। जिस पर प्रशासन के उपखंड अधिकारी ने मौके पर पहुंच कर समझाइश की। इसके बाद ग्रामीण व साधु-संत लौट आए लेकिन खनन कार्य शुरू होने पर पहुंच गए। जिस पर प्रशासन की समझाइश के बाद खनन कार्य को बंद कराया गया।

इनका कहना है...

साधु-संत व ग्रामीण खनन क्षेत्र में पहुंच गए जिसके टा बंद गई। दोनों पक्षों की समझाइश कर मामला शांत क लीजधारक के कार्यालय में तोड़फोड़ की गई है। पिलखान में दिया है।

प्रकाश चंद मीणा, तहसीलदार

तहसीलदार प्रकाशचंद मीणा व पुलिस ने पहुंच कर समझाइश की। बाद में आदिबद्री पर्वत पर चल रहे खनन कार्य को बंद कराया। उपखंड अधिकारियों ने बताया कि समझाइश के बाद लीज धारक के कार्यालय में तोड़फोड़ करने वाले 5 गांव के लोग और आसपास के 10 गांव के लोग एकत्रित हुए हैं। इस दौरान किसी भी तरह की अप्रिय घटना न हो इसके लिए पुलिस बल तैनात किया गया है। साथ ही आदिबद्री पर्वत पर खनन कार्य को बंद कराने के लिए 5 गांव के लोग और आसपास के 10 गांव के लोग तीन-चार दिन बंद करने की बात कही। उन्होंने कहा कि उनका संघर्ष तब तक जारी रहेगा जब तक आदिबद्री पर्वत पर खनन कार्य पूरी तरह से बंद नहीं हो जाता।

खनन का विरोध... सुनवाई नहीं हुई तो 10 अप्रैल के बाद होगा आमरण अनशन

भास्कर संवाददाता | डीग

आदिबद्री-कंकाचल पर्वतीय क्षेत्र में खनन के विरोध में अनिश्चितकालीन धरने के दौरान जयपुर पहुंचे धरनार्थियों ने जन चेतना यात्रा निकालकर पर्वतों पर हो रहे खनन को अविलंब बंद करने की मांग की। ब्रज के लोकगीतों के साथ कीर्तन करते हुए शहीद स्मारक से चलकर सिविल लाइन फाटक तक लंबी कतार में पहुंचे धरनार्थियों ने सरकार को ब्रज की पौराणिक संपदा

जिला कलक्टर के आग्रह पर महापड़ाव स्थगित

पत्रिका न्यूज नेटवर्क
patrika.com

डीग. गांव पंसोपा में आदिबद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे खनन के विरोध में चल रहे 94 वे दिन सोमवार को बअापरगडी. नागल व

महापड़ाव का कार्यक्रम जब तक यह राष्ट्रीय विपदा समाप्त नहीं हो जाती हैं, तब तक स्थगित रखें। गोपी गुर्जर ने कहा कि इस पर हमारे संरक्षण समिति के वरिष्ठ पदाधिकारियों के बीच में चर्चा हुई।

दैनिक भास्कर

भरतपुर भास्कर 03-04-2021

भरतपुर

बृज के पहाड़ों को खनन मुक्त कराने के लिए वृंदावन में साध्वियों ने निकाली यात्रा

आदिबद्री में खनन के विरोध में 67वें दिन भी जारी रहा धरना, लोगों ने की सहोदरा की अपील

भास्कर संवाददाता | डीग

आदिबद्री सहित कंकाचल पर्वतीय क्षेत्र में हो रहे खनन के विरोध में पंसोपा में चल रहे साधु संतों के अनिश्चितकालीन धरने के सोमवार को 67वें दिन भी जारी रहा धरना स्थल पर एकत्रित होकर विधिवत पूजन व संकल्प कर गांव अलीपुर, पंसोपा व कोडली में जाकर महिलाओं से संपर्क कर महापड़ाव में बड़ी भूमिका निभाने के लिए प्रदर्शन कर प्रचार किया। इधर बरसाना स्थित मान मंदिर पर रंगीली के अवसर पर एकत्रित हुए जन समुदाय को बरसाना के विरक्त संत रमेश बाबा की आज्ञा से मान मंदिर के अध्यक्ष राधाकांत शास्त्री ने आगामी महापड़ाव की जानकारी दी और 10 अप्रैल के बाद आयोजित होने वाले महापड़ाव में देश के कोने-कोने से बड़ी संख्या में महापड़ाव में आने का संकल्प दिलाया। राधाकांत शास्त्री ने कहा कि ब्रज की संस्कृति पूरे भारत की प्राचीनतम संस्कृति है और देश ही नहीं अपितु पूरे विश्व की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक धरोहर है जिसे निर्ममता के साथ खननकर्ताओं द्वारा नष्ट किया जा रहा है। उसको अभी नहीं रोका गया तो हमारी पौराणिक संपदा, प्राचीन परंपरा व पर्यावरण सब खंड-खंड हो जाएगा। मान मंदिर के संत नरसिंहदास महाराज ने कहा कि अभी नहीं जागे तो आदिबद्री और कंकाचल पर्वत का अस्तित्व ही नष्ट हो जाएगा। उन्होंने आह्वान किया अब करो या मरो की स्थिति है। उल्लेखनीय है कि 25 मार्च को जन चेतना मार्च का आयोजन किया जा रहा है। साधु संतों ने 10 अप्रैल तक सरकार के निर्णय की प्रतीक्षा करने की बात कही है। इसके बाद एक विशाल महापड़ाव भरतपुर में डाला जाएगा। 66 दिन से धरने पर बैठे लोगों की बात पर ध्यान नहीं देने पर साधु संतों ने रोष जाहिर कर आंदोलन को तेज करने की चेतावनी दी है।

दैनिक भास्कर

भरतपुर

साधु-संतों ने लिया संरक्षित वन क्षेत्र नहीं होने तक आंदोलन का संकल्प, अब 7 से रोकेंगे खनन वाहन

भास्कर संवाददाता | डीग

डीग. आदिबद्री में हुई बैठक में साधु-संत व ग्रामीण।

आदिबद्री पर्वतीय क्षेत्र में खनन को लेकर किए जा रहे विरोध में बैठक गांव पंसोपा में जारी धरने के 77 वें दिन आंदोलनकारियों ने अब तक के आंदोलन को संपूर्ण जिलेय व्यापक बैठक की। बैठक में सरकार और प्रशासन की ओर से खनन बंद करने को लेकर अभी तक कोई ठोस कार्रवाई नहीं किए जाने को लेकर रोष व्यक्त किया गया। आंदोलनकारियों ने चार मार्च को हुए समझौते को लेकर कहा कि समझौते में तय समयावधि में कोई कार्रवाई नहीं होने पर 7 अप्रैल से खनन वाहनों को रोकेंगे। बैठक में तय किया गया कि 7 अप्रैल को सुबह 10 बजे से सभी ग्रामीण पंसोपा में एकत्रित होकर खनन वाहनों को रोकेंगे। बैठक में सर्वसम्मति से यह भी तय किया गया कि 10 अप्रैल को सुबह 10 बजे से सभी ग्रामीण पंसोपा में एकत्रित होकर आमरण अनशन पर बैठेंगे। बैठक में सरपंच सुलतान सिंह ने कहा कि आगामी महापड़ाव को रैयाली जोरों पर है। अगर सरकार पहले की तरह नहीं चेती तो वे केवल भास्तूर में ही नहीं कल के हर गांव व आदिबद्री क्षेत्र हर खान पर महापड़ाव डाला जाएगा। आंदोलनकारी एक साथ संकल्प लिया कि 7 अप्रैल के बाद पूरे ब्रज में एक भी ट्रक खनन लिए हुए पत्थरों को नहीं ले जा सकेगा।

इधर संरक्षण समिति के पूर्व संरक्षक व महिलाओं के बल रोगी दल ने भी महापड़ाव के लिए समय प्रचार प्रसार कर समाज के गांव किकलोली, पालपुर, कामां के गांव सुजारा, रपखोले एवं चाहा में जाकर वहां की महिलाओं से संपर्क कर महापड़ाव की तैयारी में जुटने के लिए प्रेरित किया।

आबकारी विभाग की मिलीभगत से नाबालिग को पुलिस ने 12 घंटे में ढूंढ निकाला

बयाना | धान बेचने के एक गांव में नाबालिग बालिका के अपहरण का

राजस्थान पत्रिका

भरतपुर, मंगलवार, 16 मार्च,2021

महंत व महामंडलेश्वरों ने मुख्यमंत्री को पत्र लिखकर खनन बंद कराने का किया आग्रह

पत्रिका न्यूज नेटवर्क
patrika.com

डीग. क्षेत्र के गांव पंसोपा में कनकाचल व आदिबद्री पर्वत पर हो रहे खनन के विरोध में चल रहे धरने के 59 वे दिन सोमवार को पंसोपा, अलीपुर, ककराला, कोलगी, उदयपुरी, पालका आदि गांवों में महापड़ाव के समितियां का गठन किया गया। वहीं आदिबद्री मंदिर पर भी दर्शनार्थियों ने बड़ी संख्या में पहुंचकर पर्वत पर हो रहे खनन के विरोध में प्रदर्शन किया। मान मंदिर के अध्यक्ष राधाकांत शास्त्री व संत बृजदास के नेतृत्व में साधुओं की एक टोली ने वृंदावन कुंज में स्थित सभी खासला, अखाड़ा व शिवरियों में व्यक्तिगत रूप से जाकर सभी महंत, महामंडलेश्वर, साधु व महाधीशों से भेंट की एवं उनको ब्रज के पर्वतों पर चल खनन के विरोध में प्रस्तावित आगामी महापड़ाव की जानकारी दी। शास्त्री ने बताया है कि वृंदावन कुंज में पधारे लगभग सभी श्रीमहंत, महामंडलेश्वरों एवं उपस्थित जगतगुरु ने राजस्थान के मुख्यमंत्री के नाम पत्र पर हस्ताक्षर कर उनसे अविलंब खनन के परम आराध्य पर्वत आदिबद्री व कनकाचल को खननमुक्त करने का आग्रह किया है।

महामंडलेश्वर श्रीसांवरिया बाबा ने कहा हैं कि बृजभूमि केवल वैष्णव संप्रदाय की नहीं अपितु हमारे सनातन धर्म के सभी मठ, मंदिरों व सम्प्रदायों के लिए अत्यंत पूजनीय है एवं उस बृजभूमि के पौराणिक चिन्ह व कृष्णकालीन पर्वतों का विनाश भारत का साधु समाज किसी भी स्थिति में सहन नहीं कर सकता है। चित्रकूट धाम के महंत श्रीरामदास ने कहा कि अधिकांश महात्माओं को अभी ब्रज के पर्वतों पर हो रही इस विनाश लीला के बारे में कोई जानकारी ही नहीं हैं। उन्होंने कहा कि वे हरिद्वार कुंभ में पहुंचकर वह इस विषय को सभी महात्माओं साधु संतों के समक्ष रखेंगे। वही महामंडलेश्वर ने कहा की आगामी महापड़ाव में वृंदावन कुंभ के सभी वैष्णव आचार्य, वैष्णव अखाड़े के महामंडलेश्वर तो सम्मिलित होंगे ही लेकिन इसकी पूरी विस्तृत चर्चा अब हरिद्वार कुम्भ में भी होगी। जहां पर आगे की रणनीति पर विचार होगा। इस अवसर पर संत बृजदास, साध्वी आराधना, साध्वी गौरी, साध्वी कवल वाला, बृजकिशोर, कृष्ण दास, महातीर्थ बाबा आदि ने भी अपने विचार रखे।

डीग. आदि बद्री धाम में प्रदर्शन करते महिला एवं पुरुष।

'खेलों से होता है युवाओं का सर्वांगीण विकास'

डीग. जय यदुवंश के गौरव अहम में श्रीखाटूश्याम राम शर्मा मानव सेवा समिति द्वारा

छात्र-छात्राओं को किया सम्मानित

ब्रज के पर्वत आदिबद्री व कंकाचल को पूरी तरह खनन मुक्त कराने के लिए धरना 48वें दिन भी जारी रहा

जयपुर| डीग तहसील के ग्राम पसोपा में ब्रज के पर्वत कंकाचल व आदिबद्री को खनन मुक्त करने की मांग को लेकर साधु-संतों व स्थानीय ग्रामीणों का धरना 48वें दिन भी जारी रहा। शुक्रवार को हजारों की संख्या पहुंचे लोगों ने जिला अधिकारी कार्यालय, भरतपुर का घेराव कर प्रदर्शन किया।

ब्रज के पर्वतों के रक्षा का संदेश लिए सैकड़ों वाहन रैली के रूप जिला मुख्यालय के समीप इक्कट्ठे हुए। यहां से पैदल मार्च करते हुए, प्रशासन के खिलाफ नारे लगाते हुए जिला कलेक्ट्रेट पर पहुंचे। नगर व पहाड़ी तहसील के ग्रामवासी, साधु संत, पर्यावरणविद आदि ने आदिबद्री व कंकाचल पर्वत पर प्रशासन के अनैतिक सहयोग से चल रहे खनन कार्य तुरन बंद करने के लिए भारी प्रदर्शन किया। वृंदावन कुंभ व ब्रज से आए संत समाज ने चेतावनी दी कि खनन पर संपूर्ण प्रतिबंध नहीं लगाया तो 10 अप्रैल को हजारों साधु-संत, वैष्णव, बृजवासी आमरण अनशन पर बैठेंगे। पूर्व विधायक गोपी गुर्जर ने प्रशासन पर खनन माफियाओं को लाभ पहुंचाने का आरोप लगाया। समाजसेवी चंद्र शेखर खूंटेटा, आदिबद्री महंत शिवराम दास, पूर्व विधायक मोतीलाल खरेरा, समिति के महासचिव बृजदास, यादव नेता महेंद्र सिंह यादव, अखिल भारतीय गुर्जर महासभा के सचिव बच्चूसिंह बैंसला, कुलदीप बैंसला, सरपंच जलाल खान आदि उपस्थित रहे।

युवा भी होंगे आंदोलन में शामिल, दल का किया गठन

आदिबद्री में खनन के विरोध में 56वें दिन भी जारी रहा धरना

भास्कर संवाददाता | डीग

आदिबद्री सहित कंकाचल पर्वतीय क्षेत्र में हो रहे खनन के विरोध में पंसोपा में चल रहा साधु संतों का अनिश्चितकालीन धरना शुक्रवार को 56वें दिन भी जारी रहा। धरना स्थल पर बड़ी संख्या में युवाओं की सहभागिता के बाद ब्रज पर्वत एवं पर्यावरण संरक्षण समिति की कार्यकारिणी व समिति में युवा दल की घोषणा की। युवा दल की बैठक में आगामी महापड़ाव को लेकर युवाओं की ओर से जिम्मेदारी तय की गई। संरक्षण समिति के अध्यक्ष महंत शिवराम दास ने सर्वसम्मति से महावीर सिंह को युवा दल का अध्यक्ष घोषित कर अन्य युवाओं को पदाधिकारी नियुक्त किया। महंत शिवराम दास ने कहा कि ब्रज के पर्वतों एवं पर्यावरण का संरक्षण एक बहुत बड़ा महत्वपूर्ण कार्य है जिसके लिए हर वर्ग को इस आंदोलन में जोड़ने की आवश्यकता है, इसी बात को दृष्टि में रखते हुए ब्रज पर्वत एवं पर्यावरण संरक्षण समिति ने युवा दल के गठन का निर्णय लिया है। सरपंच सुलतान सिंह ने कहा कि अगर सरकार की ओर से 10 अप्रैल तक आदिबद्री व कंकाचल पर्वत को खनन मुक्त नहीं किया गया तो महापड़ाव को सफल बनाने के लिए हर युवाओं को प्रतिनिधित्व भी किया जाएगा।

डीग. धानसखल पर बड़ी संख्या में एकत्रित युवा।

इस आंदोलन को अभी तक बहुत अधिक व्यापक नहीं किया है। अगर समय रहते सरकार ने सोधता से कंकाचल और आदिबद्री पर्वत को खनन मुक्त कर उसे संरक्षित वन क्षेत्र में नहीं स्थानांतरित किया तो विशाल शेकर इस आंदोलन को एक वैश्विक रूप देना पड़ेगा। युवा दल के अध्यक्ष महावीर सिंह ने कहा कि हमारा दल न केवल ब्रज क्षेत्र के युवाओं को इस आंदोलन से जोड़ने का कार्य करेगा अपितु ब्रज के पर्यावरण, पर्वत, पौराणिक परंपरा, संस्कृति एवं प्राकृतिक संपदा के संवर्धन व संरक्षण की जागरूकता संपूर्ण प्रदेश के युवाओं में फैलाएगा।

मान मंदिर के अध्यक्ष राधाकांत शास्त्री ने कहा कि हमारा आंदोलन एक वैश्विक आंदोलन है। लेकिन सरकार से बातचीत के चलते एवं उनके सकारात्मक रवैये के कारण

ओलावृष्टि से फसलों में नुकसान का